राजद समाचार

समानता, भाईचारा और आजादी

अंक-9 मासिक अप्रैल, 2022 सहयोग राशि - 20 रुपये

इस बार

देश-दुनिया : 04

विधान सभा में तेजस्वी यादव : 06

अमेरीकी कॉलेज का प्रतिरोध : प्रमोद रंजन : 12

डा आंबेडकर पर क्रिस्तोफ जाफ्रलो : 14

अपना-अपना इतिहास : मनोज झा : 18

विरासत : गुलामगिरी - जोतीराव फुले : 20

कवि का पन्ना : वन्दना टेटे : 27

पार्टी गतिविधियां : 28

कश्मीर पर फिल्म

विवेक अग्निहोत्री की फिल्म 'द कश्मीर फाइल्स' ने पखवारे भर में दो सौ करोड़ रूपए से अधिक कमाकर मुनाफे का एक रिकार्ड बनाया है। उनकी फिल्म 1990 में घटित कश्मीर की दुर्भाग्यपूर्ण घटनाओं पर है जिसमें लगभग सौ कश्मीरी पंडितों की निर्मम हत्या और कोई नब्बे हजार लोगों का अपनी जन्मभूमि से पलायन हो गया था। यह अत्यंत दुर्भाग्यपूर्ण घटना थी, जिसकी तब और आज हर कोई निन्दा करता है। लेकिन इस घटना को आधार बना कर ऐसी फिल्म बनाना, जिससे लोगों की भावनाएं भड़कें और फिर कोई कोहराम खड़ा हो, क्या उचित कहा जाएगा? और जब सरकार उसे टैक्सफ्री कर प्रोत्साहित करती है तब तो वह निश्चित ही गंभीर रूप से विचारणीय बन जाता है। इस फिल्म को लेकर संसद में चर्चा हुई और प्रधानमंत्री ने हस्तक्षेप करते हुए फिल्म की यह कहते हुए तारीफ की है कि इससे सत्य उद्घाटित हुआ है। मानवीय दुःख और दुखांतकियाँ हमारे साहित्य के प्रेरणास्रोत रहे हैं। युद्ध की विभीषिका महाभारत महाकाव्य का आधार है। लेकिन महाभारत के रचयिता हमें यही सन्देश देते हैं कि युद्ध से बचना चाहिए। उससे किसी को कुछ भी हासिल नहीं होता सिवाय पश्चाताप के। महाभारत कथा को आधार बना कर लिखे गए धर्मवीर भारती के आधुनिक नाटक 'अंधायुग' का निहितार्थ भी यही है। इसीलिए जब हम किसी बड़ी दुर्घटना को काव्य या कला, जिसमें फिल्म भी हैं, का जब आधार बनायें तब यह सावधानी अवश्य बरतें कि उसे पढ़ या देख कर पाठक-दर्शक की मानसिकता कैसी होती है। सनसनी, क्रोध और बदले की भावना यदि बलवती होती है तब यह माना जाएगा कि वह कला नहीं, प्रोपगेंडा है। सत्य है कह कर हम अपनी नैतिक और सामाजिक जिम्मेदारी से भाग नहीं सकते।

सत्य को लेकर दुनिया के विभिन्न हिस्सों में, विभिन्न सभ्यताओं में पर्याप्त विमर्श हुआ है। हमारा भारतीय चिंतन कहता है कि सत्य बोलो, प्रिय बोलो, अप्रिय सत्य कभी मत बोलो। (सत्यं ब्रूयात प्रियं ब्रूयात, न ब्रूयात सत्यं अप्रियं) कभी-कभी अप्रिय सत्य को छुपाना पड़ता है। नग्न सत्य से परहेज की नसीहत यूनानी दर्शन ने भी दी है। ग्रीक पौराणिकता की एक कथा के अनुसार ज्ञान की देवी मिनर्वा का एक भक्त उन्हें प्रसन्न करके नग्न सत्य को देखने की जिद करने लगा। मिनर्वा ने भक्त को खूब समझाया कि सत्य को नग्न देखना उसके लिए ही हितकारी नहीं है, उसे परदे के भीतर ही रहने देना है। भक्त की निरंतर जिद से आजिज आ कर देवी ने सत्य का आख़िरी पर्दा उठा लिया और फिर एक भयावह विनाश उभर आया। सब कुछ विनष्ट हो गया।

कश्मीर की घटना हो या कहीं की, कोई लेखक, फिल्मकार या विचारक उस घटना को विमर्श या कृति में जब तब्दील करता है, तब उसका इष्ट एक ऐसी स्थिति को बल देना होता है जिससे मानवता बलवती हो। हमारे भारतीय काव्य शास्त्र ने कला की दुनिया के लिए सत्यं शिवम् सुंदरम का आदर्श रखा है। सत्य ऐसा हो, जिसमें शिव अर्थात् कल्याण का भाव हो। क्योंकि वही सत्य सुन्दर होता है, जो कल्याण भाव से मंडित होता है। नग्नता भी सत्य है किन्तु उसकी सिफारिश कोई नहीं करता। यदि इस फिल्म में सत्य, शिव और सुन्दर की संगति होती तो हर कोई इसकी प्रशंसा करता। लेकिन ऐसा नहीं है। यह हिंसा और नफरत के जज़्बे को बढ़ाती है।

कश्मीर भारत का अविभाज्य अंग है और रहेगा। वहां की राजनीतिक-सामाजिक स्थिति कुछ अलग है। वह ब्रिटिश भारत का हिस्सा नहीं था। राजा रंजीत सिंह के बाद जब अंग्रेजों ने पंजाब पर दखल जमाया तब भी कश्मीर उसमें शामिल नहीं हुआ। वहां रजवाड़ी हुकूमत बनी रही। आज़ादी के वक्त जब देश का विभाजन हुआ और दो देशों का जन्म हुआ तब अनेक देशी रियासतों को इस या उस देश में शामिल कर लिया गया। कई रियासतों के विलय में कुछ पेचीदगियां खड़ी हुई। उसी में एक रियासत कश्मीर भी था। वहां जनसंख्या मुसलमानों की अधिक थी, लेकिन राजा हिन्दू था। लेकिन लोकतान्त्रिक दुनिया में जनता ही मुख्य होती है। कश्मीर के मान्य नेता शेख अब्दुला सोशलिस्ट थे। उन्होंने कश्मीर को भारत में रहने के लिए आंदोलन छेड़ दिया। पाकिस्तान कश्मीर पर आँख गड़ाए था। भारतीय नेताओं की सूझ-बूझ से कश्मीर को भारतीय गणराज्य में शामिल किया गया।

कश्मीर का सामाजिक मामला भी कम उलझा हुआ नहीं था। हजारों साल से वहां पंडितों को राजाओं के द्वारा गाँव दान में दिए जाते थे। इन गाँवों को अग्रहार कहा जाता था। इन गाँवों से राजा किसी प्रकार का कोई टैक्स नहीं लेता था। स्थिति यह थी कि अधिकांश भूमि पर पंडितों की मिल्कियत थी, लेकिन उस पर खेती करते थे भूमिहीन किसान जो धर्म से मुसलमान थे। जब शेख ने ज़मींदारी उन्मूलन की मांग की और किसानों को जमीन का मालिकाना दिलवाने का आंदोलन किया तब किसानों में चेतना जगी। स्थितियां ऐसी बदली कि शेख कश्मीर के प्रधानमंत्री (तब मुख्यमंत्री को प्रधानमंत्री ही कहा जाता था) बने, तब ज़मींदारी ख़त्म कर दी और किसानों को जमीन की मिल्कियत मिल गई। इस घटना से पंडितों में शेख के प्रति जो घृणा का भाव आया वह किसी-न-किसी रूप में बना रहा।

लेकिन 1990 के इर्द-गिर्द दिल्ली की सरकारों ने भी एक पर एक गलतियां की और उसके दुष्परिणाम आये। कश्मीरी लोग प्रायः शांत तबियत के होते हैं। वहां कोई सांप्रदायिक जुनून भी नहीं था। पाकिस्तान की लगातार कोशिश रही कि वहां सांप्रदायिक माहौल बने। कुछ लोगों ने इसे हवा दी। इसी के कारण 1990 की दुखद घटनाएं हुईं। लेकिन क्या उन दुखद घटनाओं को जिन्दा रखना चाहिए या उसे भूल कर फिर से कश्मीर में अमन चैन बनाने की कोशिश करनी चाहिए? भाजपा चाहती है कि कश्मीरी मामले को सुलगाये रखो ताकि भारत भर में सांप्रदायिक ध्रुवीकरण हो और इसी आधार पर उसकी राजनीति होती रहे। जब उद्देश्य ही नफरत की राजनीति करना है तब कोई क्या कर सकता है। हमारे भारतीय समाज में वर्ग और जाति के भयावह भेद है। इसके झगड़े भी हैं। दलित-आदिवासी प्रश्न हमारी पौराणिकता से लेकर रोजमर्रे के जीवन में सवाल-दर-सवाल उठाते हैं। गांव-गांव में नफरत के भाव हैं। यह सब नग्न सच्चाई है। लेकिन सच यह भी है कि नफरत के आधार पर कोई राष्ट्र और समाज न विकास कर सकता है और न खुशहाल हो सकता है। सवाल केवल कश्मीर का नहीं है। पूरे देश का है। जाति और मजहब के आधार पर, नफरत की बुनियाद पर हम किसी खुशहाल राष्ट्र का निर्माण नहीं कर सकेंगे। इसलिए यह जरूरी है कि हम कश्मीर फाइल्स जैसी फिल्मों को नकारें। 1947 के देश विभाजन के समय जाने कितने अप्रिय सच दृश्यमान हुए। उन्हें लेकर उपन्यास लिखे गए, कहानियाँ लिखी गईं। फ़िल्में भी बनी। लेकिन, उनसे एक ही सन्देश निकलता है कि ऐसी घटना फिर न हो। हमारा देश-समाज फिर से विखंडित नहीं हो। हिंसा और विभाजन, मजहबी जुनून बिलकुल फालतू-सी बात है और इसे हर हाल में ख़ारिज करना है। प्रेम, भाईचारा और विवेक के आधार पर ही कोई देश-समाज आगे बढ़ सकता है।

नफरत और हिंसा फ़ैलाने वाले हर चीज का हमें जोरदार प्रतिकार करना है। हमारी मांग यही होगी कि उस फिल्म से की गई कमाई को सरकार अपने हाथ में ले और उसे उत्पीड़ित कश्मीरियों के पुनर्वास में खर्च करे।

क्लॉड ईथरली, मिर्जा हुसैन और भिक्खु विराथु

मैं नहीं जानता इन तीनों नामों से आप परिचित हैं या नहीं। नहीं हैं, तो होना चाहिए।

क्लॉड ईथरली दूसरे विश्वयुद्ध के दौरान अमेरिकी हवाई सेना का एक अधिकारी था, जिसने 6 अगस्त, 1945 को जापानी शहर हिरोशिमा पर एटम बम गिरा कर उसे तबाह कर दिया था। उसकी इस कार्रवाई ने अमेरिका को दुनिया का दादा बना दिया। जाहिर है अपने देश के राष्ट्रवादियों का वह नायक बन गया। उसे वार हीरो का ख़िताब दिया गया। उसकी तस्वीरें पूरे अमेरिकी मीडिया में छा गई।

लेकिन क्लॉड ईथरली, जो इस घटना का एक हिस्सा था, अंदर से हिल गया था। जब वह उस रोज उड़ान पर था, उसने दूर आसमान से हिरोशिमा शहर को निहारा था। बेहद खुशनुमा सुबह थी। लोग अभी सोये ही हुए थे। हालांकि ताज़े सुबह की हल्की रौशनी शहर पर पसरती जा रही थी। ऐसे ही ऊंघते नगर पर उसने एटम बम गिराए थे। सबकुछ क्षण भर में तबाह हो गया। बम गिरा कर वह तो भाग गया, लेकिन उन्हीं अख़बारों ने तबाही के वो दृश्य भी छापे, जिसने उसकी तस्वीरें और ख़िताब मिलने की खबर छापी थी। क्लॉड ईथरली विचलित हो गया। उसने अपनी सारी संपत्ति हिरोशिमा के मेयर को भेज दी ताकि वह पीड़ितों की मदद कर सकें। वह अजीब हरकतें करने लगा। उसने पोस्ट ऑफिस पर डाका डाला और प्राप्त रकम हिरोशिमा के मेयर को भेज दिया। उसने लूटमार और डाके डाल कर धन इकठ्ठा करना शुरू किया ताकि वह पीड़ितों की मदद कर सके। अमेरिकी सरकार ने पहले तो कुछ बार उसको निर्दोष बता कर छोड़ दिया, लेकिन जब उसकी कार्रवाइयां बढ़ने लगीं तब उसे पागल घोषित कर पागलखाने में डाल दिया। यह 1960 की घटना है। पागलखाने में ही उसकी मौत 1978 में हुई। लेखक मुक्तिबोध ने 'क्लॉड ईथरली' शीर्षक से ही एक कहानी 1960 के इर्द-गिर्द लिखी थी। यह कहानी आज सब को पढ़नी चाहिए।

मिर्ज़ा हुसैन वह शख्श है, जिसने अफगानिस्तान के बामियान

में स्थित सातवीं सदी में निर्मित बुद्ध की सब से ऊँची मूर्ति को ध्वस्त किया था। विश्वविख्यात यह मूर्ति बलुआ पत्थर की बनी हुई थी और मीलों दूर से दिखाई पड़ती थी। जिन कलाकारों ने इसे बनाया होगा, उनकी कल्पना शक्ति, धैर्य और रचनात्मक ऊर्जा का यह सबूत था। दुनिया का एक अजूबा आश्चर्य, जिसे मनुष्य ने अपनी मिहनत से संभव किया था। लेकिन तालिबानियों को लगा कि इसे नष्ट किये बिना उनका इस्लाम नहीं बचेगा। छब्बीस साल के नौजवान मिर्ज़ा हुसैन को जिम्मा दिया गया कि हर हाल में बामियान बुद्ध को ध्वस्त कर देना है। मिर्ज़ा हुसैन ने कड़ी मिहनत की। ड्रिल करके बारूद से पूरी मूर्ति को जगह-जगह भर दिया गया और तब विस्फोट किया गया। उसे उम्मीद थी, मूर्ति तो मूर्ति पूरा पहाड़ ही उड़ जाएगा। लेकिन सैकड़ों मन बारूद से केवल मूर्ति की टांग ही ध्वस्त हो सकी। तालिबानी बौखला गए। फिर तो मिर्ज़ा के नेतृत्व में लगातार पचीस दिनों तक अनेक तोपों से गोले बरसाये गए अंततः मूर्ति ख़त्म हुई .. यह 2001 की घटना है।

आज मिर्ज़ा हुसैन 47 साल का है। वह बामियान में पंचर मरम्मत करने का धंधा करता है। बामियान में पहले पर्यटक आते थे। अब कोई नहीं आता। उदास शहर में उसका धंधा भी कमजोर है। मिर्ज़ा हुसैन को आज अपने किये का बहुत अफ़सोस है। जो वह मिटा चुका है, उसे बना नहीं सकता। लेकिन उसकी ख्वाहिश है कि दुनिया भर के लोग मिल कर उस मूर्ति को एक बार फिर से बनायें, वह बिना मजूरी लिए काम करने का इच्छुक है। वह चाहता है इसी सिलसिले में उसकी मौत हो जाए ताकि उसके किये का कुछ प्रायश्चित हो सके।

अब तीसरे शख्स हैं अनीश विराथु, जो म्यांमार का बौद्ध भिक्षु है और दिन रात अपने देश के मुसलमानों के खिलाफ आग उगलता है। 1968 में जन्मा विराथु चौदह साल की उम्र में पढ़ाई छोड़ दी और बौद्ध भिक्षु बन गया। जब वह बत्तीस साल का था, तब बामियान बुद्ध को ध्वस्त किया गया था। वह बिफर उठा। म्यांमार में मुसलमानों के खिलाफ उसने अभियान छेड़ दिया। हिंसा हुई और कोई दर्जन भर लोग मारे गए। भिक्षु विराथु गिरफ्तार किया गया और उसे पचीस साल की सजा सुनाई गयी। लेकिन आठ साल बाद वह छोड़ दिया गया। उसने रोहिंग्या मुसलमानों के खिलाफ ऐसा वातावरण बना दिया है कि उन सब का जीना मुश्किल है। विराथु की खासियत है कि वह फर्राटे के साथ किसी को भी गाली दे सकता है। रंडी, कुतिया जैसे शब्द तो उसकी जुबान पर ही होते हैं। यूनाइटेड नेशन की अधिकारी योगी ली को इन गालियों से वह नवाज चुका है। बर्मी थेन सेलिन सरकार को मानो वह डिक्टेट करता था। कह सकते हैं कि एक बौद्ध तालिबान के रूप में वह उभर चुका है। उसे खुद को ओसामा बिन लादेन कहे जाने पर कोई एतराज नहीं है।

विराथु की चर्चा कुछ खास कारणों से की है। शायद आपको पता होगा अपने देश भारत में भी यह नाम चर्चा में है। सोशल मीडिया पर कुछ लोग भारतीय संतों को उसके जैसा होने की सलाह दे रहे हैं। महाराष्ट्र और उत्तर प्रदेश में साधुओं की मोब लिंचिंग के बाद ये लोग विराथु से प्रेरित हो रहे हैं। मुसलमानों के खिलाफ हवा बनाने में इस नाम का प्रतीक रूप में इस्तेमाल करने की कोशिश की जा रही है। इसके पीछे की शातिर मानसिकता को समझा जा सकता है। दलितों और पिछड़े वर्गों के बड़े हिस्से पर बौद्ध धर्म का प्रभाव उभर रहा है। इस विराथु प्रतीक के माध्यम से मुस्लिम विरोध को भारत में भी समाज के निचले हिस्सों तक ले जाया जा सकता है।

लेकिन नफरत और हिंसा का यह सिलसिला हमें कहां ले जाएगा। यदि विराथु के अंतर्मन में सचमुच बुद्ध-वचनों के कुछ तत्व हैं और उनकी करुणा को कभी उसने यदि जाना है, तो मुझे इत्मीनान है कि एक रोज वह भी अपने किये का अफ़सोस करेगा। हम बार-बार हिरोशिमा और बामियान के पतन के बाद ही क्यों सोचते हैं। हमारे भीतर जो क्लॉड ईथरली, मिर्ज़ा हुसैन और भिक्षु विराथु बैठा है, वह यदि पहले ही कुछ संकल्प ले, तो बेहतर है। उन्माद, हिंसा और नफरत से हम केवल विनाश की ओर ही जा सकते हैं। विनाश के पश्चात् प्रायश्चित करने से अच्छा है, उसके पहले ही कुछ चिंतन करें।

अलविदा एजाज़ अहमद

सुप्रसिद्ध मार्क्सवादी चिंतक-लेखक एजाज़ अहमद पिछले 9 मार्च को दिवंगत हो गए। उनका निधन भारतीय उपमहाद्वीप की बौद्धिक दुनिया के लिए गहरी क्षति है। एजाज़ अहमद जब किसी विषय पर बोलते या लिखते थे, तो पूरी वैचारिक स्पष्टता होती थी। वह घरघुस्से चिंतक-लेखक नहीं थे। यूनिवर्सिटियों में छात्रों के बीच बोलना उन्हें बेहद पसंद था। वह यह मान कर चलते थे कि इन्हीं नौजवानों से कुछ उम्मीद की जा सकती है। वे कभी जड़ मार्क्सवादी नहीं रहे। बदलती हुई सामाजिक-राजनीतिक स्थितियों में बोल्शेविक जमाने की जड़ता का उन्होंने कभी समर्थन नहीं किया। वह यह भी मानते रहे कि उन्नीस सौ बीस-तीस के दशक का ही फासीवाद अब नहीं आएगा। नए रूपों में उभरते फासीवादी उभारों को उन्होंने चिह्नित करने की कोशिशें की। भारत और पाकिस्तान में उभरते लोकतंत्र के खतरों को वह पहचानते थे और उस पर बेबाकी से अपनी बात रखते थे। मुझे स्मरण है उनके भाषणों की एक या दो पुस्तिकाएं 'पहल सीरीज' में लेखक ज्ञानरंजन जी ने बहुत पहले हिन्दी में प्रकाशित करवाई थीं।

1941 में भारत के उत्तर प्रदेश में जन्में एजाज़ जब छह साल के ही थे, तब भारत का बंटवारा हुआ और उनका परिवार पाकिस्तान चला गया। पढ़ाई पूरी कर वह शिक्षक बने। ख्यात कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय में तुलनात्मक साहित्य के प्रोफेसर रहे। विद्वान एजाज़ का सम्बन्ध भारत और यहां की बौद्धिक दुनिया से जीवन्त स्तर पर रहा। भारतीय बुद्धिजीवियों ने भी उन्हें बहुत सम्मान से देखा-सुना-पढ़ा। उनके अवसान पर उनके लिए श्रद्धांजलि देने वालों की भीड़ उमड़ पड़ी। यह उनकी लोकप्रियता का सूचक है।

एजाज़ साहब! उदास दिल से अलविदा! हम आप को कैसे भूल सकते हैं!

– प्रेमकुमार मणि

पांच राज्यों के चुनावी नतीजे

उत्तरप्रदेश, उत्तराखंड, पंजाब, गोवा और मणिपुर में विधानसभा के चुनाव नतीजों ने भाजपा का हौसला बढ़ाया है। चार प्रांतों में भाजपा और पंजाब में आम आदमी पार्टी ने सफलता हासिल की है। पंजाब की कुल 117 सीटों में से अकेले 92 सीटें जीत कर आम आदमी पार्टी ने कमाल का प्रदर्शन किया है। उत्तराखंड, गोवा और मणिपुर में तो फिर से भाजपा आई ही है, उत्तरप्रदेश में भी दुबारा आई है। अनेक लोगों का अनुमान था कि भाजपा को उत्तरप्रदेश में लौटना मुश्किल होगा। लेकिन ऐसा नहीं हुआ। उसकी सीटें थोड़ी जरूर कम हुई, लेकिन वोट प्रतिशत में थोड़ा इजाफा ही हुआ है। इस तरह जो लोग उत्तरप्रदेश के आधार पर 2024 के लोकसभा चुनावों का पूर्वानुमान लगा रहे थे, वे अब यह सोचने के लिए विवश होंगे कि 2024 में भाजपा को केंद्र से हटाना आसान नहीं होगा। राष्ट्रीय स्तर की पार्टी कांग्रेस को यूपी में केवल दो फीसद वोट मिले हैं। पंजाब से वह सत्ताच्युत हो गई है। गोवा में वह पहले के मुकाबले बहुत कम हो गई है। इस तरह बड़े परिप्रेक्ष्य में वह और कमजोर हो गई है। उत्तरप्रदेश में प्रियंका गांधी की मिहनत का कोई असर नहीं हुआ। कुल मिला कर भाजपा ने न केवल चार प्रांतों में स्वयं को लाया, बल्कि कांग्रेस को पहले से अधिक कमजोर भी कर दिया।

लेकिन इन चुनावों के निहितार्थ क्या हो सकते हैं? इस पर सोचने के लिए हम अभिशप्त हैं। मुल्क में महंगाई, बेरोजगारी, अव्यवस्था सब चरम पर है। पिछले वर्षों में कोविड-19 का कहर जिस तरह हुआ और लाखों लोग जिस तरह अस्पतालों की बदइंतज़ामी और ऑक्सीजन के अभाव में मरे उसका कोई प्रभाव इस चुनाव पर नहीं पड़ा। भाजपा ने इस बीच लगातार जनविरोधी फैसले लिए, लेकिन इन सबके बीच उसे मिली चुनावी सफलता बतलाती है कि हमारी भारतीय राजनीति में मौलिक रूप से कुछ ऐसा है जो चिंतनीय है।

तो क्या भारत का लोकतंत्र भी चीन और रूस के "लोकतंत्र" की तरह हो जाएगा, जिसमें सिन जिनपिंग और पुतिन की तरह मोदी आजीवन मुल्क के भाग्यविधाता बने रहेंगे? आखिर हमारा लोकतंत्र कहाँ पहुँचने जा रहा है।

लोग कहने लगे हैं कि इस चुनाव ने तय कर दिया है कि 2024 में क्या होगा। 2025 में आरएसएस का शताब्दी समारोह है। क्या उस समय तक सचमुच भारत को हिन्दू राष्ट्र घोषित कर दिया जाएगा? यदि ऐसा हुआ तो क्या राष्ट्रीय स्वतंत्रता आंदोलन के मूल्य और भारतीय लोकतंत्र का मौजूदा धर्मनिरपेक्ष स्वरुप भी उसी तरह एकबारगी ख़त्म हो जाएंगे या बिखर जाएंगे

जैसे 1991 में रूस में बोल्शेविक क्रांति के मूल्य एकबारगी बिखर गए थे।

कुछ लोग विपक्ष की विफलताओं का ठीकरा राहुल गांधी परिवार पर फोड़ते रहे हैं। लेकिन इसमें कुछ सच्चाई भी क्या? यह नहीं लगता कि राहुल, उनकी माँ सोनिया जी या उनकी बहन प्रियंका राजनीति से संन्यास ले लें तो कांग्रेस का भला हो जाएगा और वह ताकतवर हो जाएगी? क्या कोई बतला सकेगा कि कौन है दूसरा कांग्रेसी जो कांग्रेस को संभाल ले। भाजपा और उसके नेता बार-बार कांग्रेस पर परिवारवाद चलाने का आरोप लगाते रहे हैं। लेकिन कांग्रेस जैसी हो गई है, क्या कोई दूसरा इसे संभाल सकता है? एक लम्बे समय तक राहुल गांधी परिवार इस पार्टी से अलग रहा। राजीव गांधी की मौत के बाद से 1999 के आरम्भ तक। कांग्रेस की जो दुर्गति हुई थी, उससे सब परिचित हैं। एक गिरी हुई कांग्रेस को सोनिया गांधी ने संभाला और 2004 में उसे फिर से सत्तासीन किया। इन बातों की चर्चा मोदी नहीं कर सकते। वह यह भी बतलाना नहीं चाहेंगे कि कम्युनिस्ट पार्टियां अप्रासंगिक क्यों होती चली गईं। उनके यहाँ तो न परिवारवाद था, न ही कोई अयोग्य नेतृत्व। केरल, त्रिपुरा और बंगाल में आज सीपीएम कहाँ है? उनके नेताओं पर तो भ्रष्टाचरण के कोई आरोप भी नहीं लगे थे।

भाजपा इसलिए नहीं सत्ता में है कि वह पवित्रों की पार्टी है और उसके मुकाबले दूसरे लोग भ्रष्ट हैं। बल्कि वह इसलिए बनी हुई है कि मध्य वर्ग उसके साथ है। यही मध्य वर्ग कभी कांग्रेस के साथ था। आज उसने अपना जुड़ाव भाजपा की तरफ शिफ्ट कर लिया है। इस मध्य वर्ग में पुराने कांग्रेसी, समाजवादी और साम्यवादी सब शामिल हैं। मध्यवर्ग ने अपनी चालाकियों के साथ हिंदुत्व की विचारधारा पर अपनी सहमति दे दी है। इस मध्यवर्ग के साथ समाज का एक बड़ा तबका भी उसका अनुगामी होता है। क्योंकि वे मानते हैं कि रास्ता वही है जिस पर बड़े लोग चलते हैं। महाजनो येन गतः सः पन्था। भाजपा ने इस रहस्य को समझ लिया है। हमें यह मान कर चलना चाहिए कि

2025 में आरएसएस का शताब्दी समारोह है। क्या उस समय तक सचमुच भारत को हिन्दू राष्ट्र घोषित कर दिया जाएगा? यदि ऐसा हुआ तो क्या राष्ट्रीय स्वतंत्रता आंदोलन के मूल्य और भारतीय लोकतंत्र का मौजूदा धर्मनिरपेक्ष स्वरुप भी उसी तरह एकबारगी ख़त्म हो जाएंगे या बिखर जाएंगे जैसे 1991 में रूस में बोल्शेविक क्रांति के मूल्य एकबारगी बिखर गए थे।

हिंदुत्व समकालीन समाज की केंद्रीय विचारधारा या तो हो चुकी है या बहुत जल्दी होने वाली है। इसी का असर है कि कभी राहुल गांधी,कभी प्रियंका पूजा स्थलों पर माथा झुकाते देखे गए हैं। हिंदुत्व पर दावे की राजनीति शुरू हो चुकी है। इस प्रतियोगिता में भाजपा नेताओं को कोई कैसे पीछे छोड़ सकता है। आप एकबार जब अपने शत्रु के अखाड़े में उतर जाते हैं तो फिर उसका काम बन जाता है।

विपक्ष में दूसरे दल और नेता भी हैं। इन नेताओं पर भी यही बात लागू होती है। समाजवादी घराने के दल वे चाहे यूपी के समाजवादी पार्टी के हों,या बिहार के, उन्हें तय करना होगा कि क्या वे मौजूदा कार्यशैली के साथ भाजपा का मुकाबला कर सकते हैं। इस पर उन्हें सोचना होगा। विचारधारा की उनके पास कमी नहीं है। हिंदुत्व से अधिक मजबूत और आकर्षक विचारधारा उनके पास है। समाजवाद, भाईचारा और दुनिया के प्रति एक वैज्ञानिक नजरिया उन्हें पुरखों से विरासत में मिला है। लेकिन मंडल दौर के बाद सब कुछ छोड़ कर उन्होंने स्वयं को कोटा-पॉलिटिक्स पर केंद्रित कर लिया। आरक्षण एक प्रोग्राम है, कोई विचारधारा नहीं है। इसकी सीमाएं हैं। इसमें बंध कर समाजवादी ताकतों ने अपनी राजनीति का व्योम छोटा कर लिया। देश -दुनिया के समसामयिक मामलों पर उन्होंने विचार करना ही छोड़ दिया। इन सब पर आत्मसुधार की जरुरत है। इसके बिना वे भाजपा का मुकाबला नहीं कर पाएंगे। पहले उन्हें इस बात पर विचार तो करना ही होगा कि वे लगातार अप्रासंगिक क्यों होते जा रहे हैं।

यूपी के इस चुनाव में विपक्ष के लिए उत्साहित करने वाली अनेक चीजें हैं। पिछले चुनाव के मुकाबले उनकी सीटें भी बढ़ी हैं और वोट भी। 2017 के यूपी विधानसभा चुनाव में समाजवादी पार्टी को केवल 47 सीटें मिली थी। इस बार शायद 112 है। सहयोगी दलों की सीटें अलग हैं। वोट प्रतिशत 21 से बढ़ कर 32 हुआ है, सहयोगियों के साथ 38 फीसद। पिछली दफा भाजपा और समाजवादी पार्टी के बीच का फासला लगभग पंद्रह फीसद वोट का था, इस बार 4 या 5 फीसद का है। यह सब उस आत्मसुधार के नतीजे हैं जो अखिलेश ने अपनी पार्टी में किए। लेकिन अब चुनाव संपन्न हो गया है। एकबारगी सफलता मिल जाना ही राजनीति नहीं होती। उन्हें कुछ और आत्मसुधार करने होंगे, चुनाव का यही सबक है। सब से पहले तो वे नतीजों को स्वीकारें और दूसरों की कमियां ढूंढने के पहले अपनी कमजोरियों को स्वीकार करें।

रूस और यूक्रेन की बातचीत

खबर है कि तुर्की की राजधानी इंस्तांबुल में रूस और यूक्रेन बातचीत करने जा रहे हैं और इसमें तुर्की की अहम भूमिका है। तुर्की के राष्ट्रपति एरदोवां भी राजनीति के मंजे हुए खिलाड़ी हैं और खुद को ओहदे तक पहुँचाने के लिए उन्होंने कम नाटकबाजी नहीं की है। लेकिन यदि सचमुच वह इस शांति अभियान में सफल होते हैं तो दुनिया भर के अमनपसंद लोग उन्हें शुक्रिया अदा करना चाहेंगे। यह दूसरा महीना है जब युद्ध लगातार चल रहा है। यूक्रेन के राष्ट्रपति व्लादिमीर ज़ेलेन्स्की अपने मुल्क की आज़ादी की हिफाजत केलिए मुस्तैदी से लगे हैं। लेकिन दुनिया जानती है कि रूस के सामने यूक्रेन बहुत मासूम है। यूक्रेन पर रूस के हमले का आर्थिक हितों के बाद बस एक ही उद्देश्य है यूरोप और अमेरिका पर पुतिन का दबदबा दिखाना। यूक्रेन इसमें इस्तेमाल किया जा रहा है।

इन सब के बीच रूसी विदेश मंत्री सेर्गेई लावरोव का भारत दौरा विश्व राजनीति के नए दाव-पेंच को इंगित करता है।भारत की जो भौगोलिक स्थिति है उसमें इसके लिए जरूरी है कि शांति और सहअस्तित्व के विश्व-दृष्टिकोण के साथ यह गुटनिरपेक्ष मनःस्थिति में रहे। हर हाल में दुनिया को युद्ध से बचाना है,क्योंकि युद्ध में हमेशा नीतिवान हासिए पर होते हैं और शक्तिशाली कुछ और दबंग हो जाते हैं। हम इंस्तांबुल शांति वार्ता की सफलता की कामना करते हैं। ■

डबल इंजन की सरकार बिहार के लिए बोझ है

तेजस्वी प्रसाद यादव

अध्यक्ष महोदय, महामहिम राज्यपाल के अभिभाषण पर यहां जो चर्चा हो रही है उस पर बोलने का आपने मौका दिया, इसके लिए आपको हम धन्यवाद देते हैं। महोदय, जब राज्यपाल का अभिभाषण चल रहा था तो हम बड़ी कोशिश कर रहे थे कि उनकी बात को गंभीरता से सुनें, लेकिन उनकी आवाज पहुंच नहीं पा रही थी, समझने में थोड़ी कठिनाई हो रही थी और महोदय, जब भी राज्यपाल का अभिभाषण होता है तो सरकार के अधिकारी जो लिख देते हैं वही पढ़ते हैं राज्यपाल महोदय; तो हम सोच में थे कि राज्यपाल अखबार डेली सुबह में पढ़ते होंगे, न्यूज डेली देखते होंगे तो जब इनको यह भाषण मिला होगा पढ़ने के लिए तो कहीं अफसोस न जता रहे होंगे और हर बार यही देखा गया है। महोदय, जब हम सुन नहीं पा रहे थे तो हमने अपने अधिकारियों को और अपने सपोर्टिंग स्टाफ को बोला कि भाई उनका स्पीच जो होगा, भाषण होगा वह लाइए, जरा देखें उसको और हमने बोला भी उनको कि और भी सालों का स्पीच साथ लाइए तो लगातार चार-पांच साल से वही फौर्मेट, वहीं कंटेंट राज्यपाल महोदय पढ़ रहे हैं, बस खाली आंकड़ा और थोड़ी बहुत छेड़छाड़ कर के उसको बदल दिया जाता है, बाकी सारा चार-पांच साल से लगातार वही भाषण जो अधिकारी देते हैं वही पढ़ते हैं। अब राज्यपाल तो डेली देखते होंगे कि इतनी हत्याएं हो रही हैं, इतना अपहरण हो रहा है, लगातार ब्लॉक से लेकर पुलिस तक भ्रष्टाचार ही भ्रष्टाचार है, शराबबंदी के वाबजूद भी लाखों लीटर शराब जप्त है, उसको चूहा पी जाता है, यहां बेरोजगारी है, भ्रष्टाचार है, आज किसान तबाह हैं उनको खाद नहीं मिल रहा है और उसी दौरान महोदय आप भी वहीं थे, हमारे माले के साथी सत्यदेव जी भी भाषण पढ़ रहे थे पैरलरली राज्यपाल के साथ ही लेकिन राज्यपाल महोदय को बार-बार हम देख रहे थे तो राज्यपाल महोदय भी मुस्कुरा रहे थे सत्यदेव जी को देखकर यानी राज्यपाल महोदय भी ये समझते थे कि उनको जो दिया गया है अधिकारियों का भाषण, वह केवल झूठ का पुलिंदा है और जो हमारे साथी सत्येदव जी पढ़ रहे थे वह बिहार की सच्चाई है, कोई इससे इंकार नहीं कर सकता है। अब महोदय एक कहानी है, जिस कहानी का हम यहां उल्लेख करना चाहते हैं। एक मुल्ला नसरूद्दीन थे, वे एक किलो मीट बाजार से खरीद कर लाये और उन्होंने अपनी बेगम को दिया कि इसको अच्छे से पकाइए और बेगम जो है उस काम में लग गईं, अच्छे से मसाला दिया, अच्छे से सिझाया, पकाया तो स्वादिष्ट मीट बना और जबतक बेगम बना रही थी मुल्ला नसरूद्दीन अपना मूड बनाने के लिए पान खाने चले गये। उन्होंने सोचा जबतक बनेगा, तबतक मूड बनाकर के वापस आते हैं। इधर मुल्ला नसरूद्दीन का बेगम जो है इंतजार करने लगी कि अब आएंगे, अब आएंगे तो बेगम सोची थोड़ा चख कर देख लें कि मीट कैसा बना है तो बेगम जो है मसाला से शुरू की चाटना, ग्रेवी जिसको कहते हैं और चाटते-चाटते एक किलो मीट वह खा गई। जब मुल्ला नसरूद्दीन वापस आये तो उनको खाली थाली परोसा गया और बेगम कहती है कि जो बिल्ली है इसने आपका सारा मीट खा लिया। अब मुल्ला नसरूद्दीन बेचैन हो गया, बिल्ली को तुरंत पकड़ा और तराजू पर नापा तौला तो बिल्ली ठीक निकली एक किलोग्राम की, तो मुल्ला नसरूद्दीन कहते हैं बेगम! ये बताओ अगर ये बिल्ली है तो मीट कहां है और ये मीट है तो बिल्ली कहां है?

तो महोदय ये जो अभिभाषण राज्यपाल महोदय का है यह उससे रिलेट करता है। अगर भाई यहां विकास हुआ तो बेरोजगारी क्यों है, अगर विकास हुआ तो नीति आयोग में सबसे फिसड्डी बिहार क्यों है, अगर विकास हुआ, क्राईम रूका तो डेली अपहरण, हत्या, लूट बलात्कार क्यों हो रहे हैं? महोदय, क्यों आज बिहार बेरोजगारी का केन्द्र बना हुआ है, क्यों किसान तबाह है, क्यों आज हमारा संविधन खतरे में है, क्यों लोकतंत्र खतरे में हैं? क्यों अस्पतालों की स्थिति सुधरती नहीं है, शिक्षा का स्तर बद से बदतर क्यों होता जा रहा है अगर विकास हुआ तो महोदय, बिहार की जनता यह सब समझ रही है और जान रही है कि कौन किसको वेबकूफ बना रहा है। महोदय, अब हम कहना चाहते हैं कि राज्यपाल महोदय को कि यह सब भी उनको कहना चाहिए था और यह पूरे बिहार का मानना है कि इस सरकार में नीति, नीयत, नियम, नैतिकता और न्याय का घोर अभाव है और महोदय ये सच्चाई है और मुझे तो बिहार सरकार महोदय मूक बधिर लगती है। बिहार सरकार लाचार, परेशान, और असहाय हमको लगती है जो न बोल सकती है, न देख सकती है, न सुन सकती है और न हाथ पैर हिला सकती है, ये सच्चाई है। इस सरकार को अवसरवादी सरकार कहना कोई गलत नहीं होगा महोदय, अभी

आप देखिये कि बीजेपी और जद(यू) की गजब की युगलबंदी है। हम तो सारा रिसर्च कर के आये हैं और एक-एक एविडेंस मेरे पास है, अपना नहीं बोल रहे हैं आप ही लोगों का बोल रहे हैं,आपकी युगलबंदी को लेकर बोल रहे हैं और ये अवसरवादी सरकार है और हम इसको प्रमाणित करेंगे महोदय। ये लोग सिर्फ और सिर्फ स्वार्थ के लिए एकजुट हैं सरकार में और कुछ नहीं, केवल स्वार्थ है उसी के लिए चिपक कर रहना चाहते हैं और कोई बात नहीं है।

आप युगलबंदी देखिये, राष्ट्रीय अध्यक्ष हैं जद(यू) के ललन जी, उनका बयान आता है कि बिहार में भाजपा के साथ गठबंधन परिस्थितिवश है। अब क्या मायने निकाला जाए, भाई परिस्थितिवश से। गोपाल मंडल जी कहते हैं कि ट्रैक्टर से दारू बेचते हैं जद(यू) के सांसद, शराब माफियाओं से मिला है प्रशासन, यह जायसवाल जी जो बीजेपी के प्रदेश अध्यक्ष हैं वे बोलते हैं। भाजपाई मंत्री और विधायक ने कहा कि अफसर नहीं सुनते हैं। पैसे लेकर हुए ट्रांसफर, मंत्रियों के घर छापे पड़े तो करोड़ों मिलेंगे। कहां गये ज्ञानू जी, ज्ञानूजी का और तो और

उपमुख्यमंत्री और मुख्यमंत्री का कंट्राडिक्शन देखिये, बिहार के उपमुख्यमंत्री बोलती हैं कि बिहार के लिए विशेषराज्य का दर्जा मायने नहीं रखता है और मुख्यमंत्री जी बोले कि नीति आयोग ने बिहार को पिछड़ा बताया है तो अब हमें विशेष राज्य का दर्जा दे दीजिये। कैसे सरकार चल रही है? अद्भुत है। कल्पना से परे है।

सरावगी जी नहीं हैं गायब हैं। उन्होंने क्या आरोप लगाया था मंत्री पर इंजीनियर को लेकर वह सब को पता है। मांझी जी बोले ठीकेदार, इंजीनियर, डॉक्टर आई.ए.एस, आई.पी.एस. और न्यायपालिका के लोग रात के 10 बजे के बाद पीते हैं शराब। महोदय, उपमुख्यमंत्री और मुख्यमंत्री का कंट्राडिक्शन देखिये, बिहार के उपमुख्यमंत्री बोलती हैं कि बिहार के लिए विशेषराज्य का दर्जा मायने नहीं रखता है और मुख्यमंत्री जी बोले कि नीति आयोग ने बिहार को पिछड़ा बताया है तो अब हमें विशेष राज्य का दर्जा दे दीजिये। कैसे सरकार चल रही है? अद्भुत है। कल्पना से परे है। हम तो यह भी सुने, मुख्यमंत्री जी ने बोला कि अगर कोई ऐसी बात बोलता है कि बिहार को विशेष राज्य का दर्जा नहीं चाहिए तो वह अज्ञानी लोग हैं यानी अपने ही उप मुख्यमंत्री को आप अज्ञानी बता रहे हैं तो भाई कैबिनेट में आपने क्यों बनाकर रखा है, उप मुख्यमंत्री क्यों बनाकर रखा है? यह तो आपको बताना पड़ेगा। क्या जुगलबंदी है बॉस! प्रशासन स्वयं शराब माफियाओं से मिला है, जायसवाल जी ने कहा और उपेन्द्र कुशवाहा जी कहते हैं संसदीय बोर्ड के जो चेयरमैन हैं कि संजय क्या बोलते हैं यह वही समझते हैं। जायसवाल जी बोलते हैं कि गठबंधन की मर्यादा एकतरफा नहीं चलेगी और हद तब हो गई जब छेदी पासवान जी मुख्यमंत्री पर आरोप लगाते हैं कि सत्ता के लिए दाउद इब्राहिम के साथ भी हाथ मिला सकते हैं। यह सच्चाई है। यह बताना पड़ेगा। लेकिन क्राईम के बारे में, न बचाते हैं, न फंसाते हैं। पर्यटन मंत्री के बेटे ने फायरिंग की। कई बच्चे जख्मी। क्या कार्रवाई हुई? क्या सुनवाई हुई? मंत्री लेसी सिंह जी पर तो कई आरोप लगे हैं, उनको एक कहते हैं न कि दूध-भात है, छूट दिया गया है। हमलोग बचपन में क्रिकेट खेलते थे, एक होता था, मेरे बडे.भाई जब बैटिंग करते थे तब हम बोलते थे कि दूध-भात है, कितने बार भी आउट हो जाएंगे, इनको फिर से खेलाओ। तो वही दूध-भात वाली बात है।

लेसी सिंह जी पर कितने भी आरोप लगेंगे, कुछ भी कराएंगे लेकिन दूध-भात है, कुछ नहीं हो सकता है, कोई नहीं छू सकता है। पशु एवं मत्स्य संसाधन मंत्री के बदले भाई ने कार्यक्रम का उद्घाटन कर गरमा दी सियासत। अब आप देखिएगा, विधान सभा पोर्टिको से पहले जो डी.एम.,एस.पी. ने मंत्री की गाड़ी रोकी थी, उन्होंने इस्तीफा देने की धमकी दी थी। चंद अफसरों के चलते मंत्री, विधायक की कोई नहीं सुनता, मैं इस्तीफा दे रहा हूं। जिनमें जमीर है वे भी पद छोड़ें। सहनी जी कहां गये? वे भी नहीं हैं, उन्होंने इस्तीफा नहीं दिया। महोदय, अब हम यह नहीं कहेंगे, सम्राट जी यहां हैं, सम्राट जी ने क्या कहा था कि व्याकुल मत होइये सदन को, हम तो नहीं कहे हैं, हम तो कुछ नहीं कहे और बिहार में भाजपा के मंत्री राम सूरत राय और पूर्व मंत्री सुरेश शर्मा आपस में भिड़े। एक-दूसरे पर भ्रष्टाचार के आरोप लगा रहे हैं। वही राम सूरत जी जिनके भाई के यहां शराब मिला था और यही नहीं महोदय, पुलिस पर बरसे बिहार के विधानसभा स्पीकर, बोले पकड़ते हैं शराब कि 100 बोतल, दिखाते हैं सिर्फ 5। महोदय, आप तो कस्टोडियन हैं, यह तो आप ही का बोला हुआ है। अगर हम कुछ गलत कह रहे हैं तो आप इसमें मत लाइये लेकिन यह तो सच्चाई है और देखिये, विकास का पैसा भाजपा सरकार ने जुमलेबाजी में खर्च किया। कहां गए मुकेश सहनी जी ? तो ये सारी बातें हमने अपनी नहीं बताई है। इसलिए महोदय, हमने कहा कि गजब का जुगलबंदी है। इसपर हमको कुछ और बताने की जरूरत नहीं है, सब लोग समझ रहे हैं। महोदय, मेरा यह कहने का मतलब है कि इस सरकार की कंट्रास्टिंग इंटेशनन्स है, इस सरकार में शामिल दलों के कंट्रास्टिंग आइडियोलॉजी है और इस सरकार में बैठे लोगों का कंट्रास्टिंग कैरेक्टर है, कंट्रास्टिंग। गजब है। मतलब कोई देखता होगा इन सब चीजों को तो बोलता होगा कि क्या है, what is this यह क्या चल रहा है what is happening all around, are you running a circus or are you running a government, यह तो लग रहा है कि सर्कस है। सच्चाई है it seems to be like a circus. People have selected us to be their representatives in the House and it is our duty

to raise their voice in the House. लेकिन महोदय, सरकार क्या कर रही है? अगर आप देखिएगा, There is no co-ordination, no co-operation, no compitablity at all in this government. Yes, there is one thing common, let us do corruption, let us do loot and plunder मतलब एक चीज इस गवर्नमेंट में कॉमन है कि चलो हम लूट करते हैं और केवल अपने स्वार्थ के लिए यहां बैठे हुए हैं। और कुछ नहीं है।

महोदय, जो घटना हुई आपके साथ लखीसराय में, यह निंदनीय है। हमलोगों ने भी बैठक में इसमें मेंशन किया था। अब आप बताइये, विधायक छोड़िये, मंत्री छोड़िये, वही कह रहे हैं कि नहीं सुनता है अफसर-अधिकारी, चपरासी नहीं सुनता है, मंत्री इस्तीफा दे रहा है, कोई कुछ कह रहा है। महोदय, आप तो हमलोगों के कस्टोडियन हैं। आपकी बात को एक थानेदार नहीं सुनता है तो आप समझ सकते हैं कि क्या अराजकता की स्थिति यहां फैली हुई है। क्या लोकतंत्र बचा हुआ है? महोदय, जब आपकी बात को न सुना जाए। इसीलिये न विगत 23 मार्च को जब बिहार स्पेशल आर्म्ड फोर्स बिल आ रहा था 2021 का तो हमने उस समय भी कहा कि पक्ष और विपक्ष के चश्मे से मत देखिये, आज आप कल्पना नहीं कर सकते हैं जब आपके साथ, मंत्रियों के साथ, हम सबों के साथ जब ऐसा हो रहा है तो अंतिम पायदान पर खड़ा जो समाज है, जो गरीब है, जो हमारा वोटर है जिन्होंने हमें इस लोकतंत्र के मंदिर में चुनकर भेजा है उसकी आवाज उठाने के लिए, उसको कैसे रौंदा जा रहा है, कुचला जा रहा है। क्या-क्या दृश्य को हमलोगों ने नहीं देखा था। इसलिए हमलोग वहां कहते रहे। अब हमको इसपर ज्यादा कुछ टीका-टिप्पणी करने की जरूरत नहीं है, लेकिन आजकल एक दौर चला हुआ है भाई, देशभक्ति का सर्टिफिकेट ले लो, जो देंगे वे देशभक्त, जो नहीं देंगे वे देशभक्त नहीं। एक एनडीए के कोई विधायक हैं, बीजेपी के कोई विधायक हैं, उन्होंने कहा कि मुसलमानों से वोटिंग राइट ले लो। हद है, अद्भुत है। इस देश की आजादी में चाहे हिन्दू हों, मुस्लिम हों, सिख हों, ईसाई हों, सब लोगों ने कुर्बानी दी है, सब लोगों ने बलिदान दिया है। हम यह बताना चाहते हैं कि किसी माई के लाल में दम नहीं है जो मुसलमान भाइयों से उनका अधिकार छीन सके। किसी में हिम्मत नहीं है लेकिन ताज्जुब होता है, धर्मनिरपेक्षता का चोला पहने हुए हैं, सेकुलरिज्म की बात करते हैं और मुख्यमंत्री जी बस बैठे हुए हैं, ताली थपथपा रहे हैं, चुप बैठे हैं। अध्यक्ष महोदय, हम यह कहना चाहते हैं कि जिस माननीय सदस्य ने, कौन बोला, नहीं बोला हम जानते नहीं है उसको लेकिन शाहनवाज भाई, आपका वोटिंग का अधिकार छीन लिया जाएगा, आप भी चुप बैठे हैं, आप वोट नहीं दे पाओगे, मुख्य सचिव, बिहार के कौन हैं, मुख्य सचिव से बिहार का वोटिंग राईट छीन लिया जाएगा, अद्भुत है। अध्यक्ष महोदय, ये बाद में बोलेंगे ....

(श्री सैयद शाहनवाज हुसैनः मंत्रीः अध्यक्ष महोदय, एक मिनट आपने मेरा नाम मेंशन किया, संसदीय परम्परा है.....)

श्री तेजस्वी प्रसाद यादवः अभी खड़े हो गये, उस समय क्यों नहीं बोला।

(श्री सैयद शाहनवाज हुसैनः हम बोले।)

श्री तेजस्वी प्रसाद यादवः नेता कहां बोले?

(श्री सैयद शाहनवाज हुसैनः आप देख लीजिए रिकॉर्ड पर। हम बता रहे हैं, माननीय अध्यक्ष महोदय, माननीय विपक्ष के नेता ने मेरा नाम मेंशन किया है, संसदीय परम्परा है कि अगर आप नाम मेंशन करते हैं तो उसको बोलने का राईट मिलता है, मैं धन्यवाद देता हू। मैं कहता हूं कि जो नागरिकता का अधिकार है, जो सिटीजेनशीप है, वह लेने का अधिकार किसी सरकार को है ही नहीं, हम सिटीजनशीप दे सकते हैं, एकबार जो भारत का नागरिक है, वह सदा का नागरिक रहेगा। भारत का संविधान नागरिकता छीनने का किसी को अधिकार ही नहीं है। चाहे कितना भी बहुमत आ जाए।)

इस देश की आजादी में चाहे हिन्दू हों, मुस्लिम हों, सिख हों, ईसाई हों, सब लोगों ने कुर्बानी दी है, सब लोगों ने बलिदान दिया है। हम यह बताना चाहते हैं कि किसी माई के लाल में दम नहीं है जो मुसलमान भाइयों से उनका अधिकार छीन सके। किसी में हिम्मत नहीं है लेकिन ताज्जुब होता है, धर्मनिरपेक्षता का चोला पहने हुए हैं, सेकुलरिज्म की बात करते हैं और मुख्यमंत्री जी बस बैठे हुए हैं, ताली थपथपा रहे हैं, चुप बैठे हैं।

श्री तेजस्वी प्रसाद यादव - शाहनवाज भाई, जो बात आप कह रहे हैं, यह बात हमको नहीं उधर समझाने की जरूरत है। यही तो बोले कन्ट्रास्टिंग कैरेक्टर है आपलोगों में। कन्ट्रास्टिंग आइडोलॉजी है आपलोगों में, यही बात तो हम कब से कह रहे हैं लेकिन रउआ लोग समझ ही नहीं रहे हैं, इसको समझिये।

अध्यक्ष महोदय, हम तो सब यही चाहते थे, आप बताइए। हमलोग तो यही अपेक्षा कर रहे थे कि भाई मुख्यमंत्री जी इसको स्ट्रॉंग्ली कंडेम करेंगे और अपने सहयोग, अपने पार्टनर को सलाह देंगे कि भाई बाहर करो ऐसे लोगों को, निकालो। क्या मुख्यमंत्री जी में ताकत नहीं है, करना चाहिए था। खैर, अब मुख्यमंत्री जानें, उनका क्या विषय है, क्या नहीं है लेकिन हम तो इनके साथ काम कर चुके हैं, छोटे हैं और इन्होंने कहा था कि...(व्यवधान)...

(श्री प्रमोद कुमार, मंत्रीः महोदय, जो इस सदन के सदस्य नहीं हैं, आर.एस.एस. के बारे में ये क्या जानते हैं और ऐसे ही बोले जा रहे हैं। दुनिया की सबसे बड़ी संगठन आर.एस.एस. है, दुनिया की सबसे बड़ी सामाजिक संगठन आर.एस.एस. है, ऐसे

शब्दों को प्रोसिडिंग्स से निकाला जाए। (व्यवधान)

(श्री तारकिशोर प्रसाद, उप मुख्यमंत्रीः अध्यक्ष महोदय, नेता, प्रतिपक्ष जी ने आज राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ पर टिप्पणी की है। यह काफी दुर्भाग्यपूर्ण है। यह ऐसी राष्ट्रवादी संस्था है, जिसके सदस्य होने में हम सब गौरवान्वित हैं। आज भारत के माननीय राष्ट्रपति, उप राष्ट्रपति और प्रधानमंत्री सभी राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के सदस्य हैं... और हम सबों को आज गर्व है कि हम राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के स्वयंसेवक हैं और ऐसी राष्ट्रवादी और सांस्कृतिक संगठन पर इस तरह की टिप्पणी उचित नहीं है। इसे कार्यवाही का हिस्सा नहीं बनाया जाए, संघ पर इस तरह की टिप्पणी को हमलोग बर्दाश्त नहीं करेंगे और एक माननीय सदस्य ने जो टिप्पणी की है, वो सदन के बाहर की है। उस माननीय सदस्य की सदन में इस तरह की टिप्पणी नहीं आयी है और आपने उसका स्पष्टीकरण भी ले चुके हैं।)

(सदन की कार्यवाही 2.45 बजे अपराह्न तक के लिए स्थगित की गई।)

श्री तेजस्वी प्रसाद यादव, अध्यक्ष महोदय, शाहनवाज भाई ने अपना पक्ष रखा हमलोग इस बात का पूरा समर्थन करते हैं, बस हम चाहते हैं कि यह बात जो है हर जगह सबको समझना चाहिए और हमलोग सबका सम्मान करते हैं, हमलोग यहां कोई हाथापाई करने नहीं आये हैं। हमलोग अलग-अलग विचारधारा के हैं। हम लोगों को इस लोकतंत्र के मंदिर में अपनी बात को रखने का पूरा अधिकार है। आपकी बात हमको बुरी लग सकती है, हमारी बात आपको बुरी लग सकती है, लेकिन हम यहां साथ बैठकर के वाद-विवाद कर रहे, चर्चा कर रहे हैं यही तो खूबसूरती है विधान सभा की, लोकतंत्र के इस मंदिर की। हम तो चाहेंगे कि हमने अब तक कोई अपशब्द का इस्तेमाल नहीं किया है आज तक और न हम आगे करेंगे सदन को हम भरोसा दिलाते हैं। सिर्फ धैर्य से सबका समय यहां एलॉट है सब अपनी-अपनी बात को रखेंगे। हमने तो बस यह उम्मीद जतायी थी कि मुख्यमंत्री जी केवल अपने वचन पर कायम रहें जो विचारधारा की बात करते हैं- क्योंकि एक्शन स्पीक्स ए लॉट, लेकिन एक्शन होता ही नहीं है केवल मुंह चलता रहता है और कुछ नहीं। महोदय, समय पर जब जवाब देना चाहिए तब नहीं आता है जवाब तो बिहार की 12-13 करोड़ जनता देख ही रही है सबकुछ कि हम क्या कर रहे हैं, आप क्या कर रहे हैं और उसका वे लोग आकलन करते ही रहते हैं। महोदय, हम अपने विषय पर फिर से आते हैं, अगर किसी को जानकारी का अभाव है, यह हम नहीं कह रहे हैं कि हमको सारी जानकारी है, हमारी तो सीखने की उम्र है सीख रहे हैं और जिंदगी भर सीखना चाहिए, लेकिन जो हमने समझा है, सीखा है वह आपलोगों को भी जानना चाहिए, अच्छी बात है और हम आपके ही पक्ष की बात कर रहे हैं, सबके पक्ष की बात कर रहे हैं। महोदय, अब आप बताइये जब इंदिरा गांधी जी प्रधानमंत्री थीं तो राकेश शर्मा अंतरिक्ष में गए थे और जब राकेश शर्मा अंतरिक्ष में थे तो इंदिरा जी ने पूछा कि अंतरिक्ष से हमारा भारत कैसा दिखता है? तो राकेश शर्मा जी ने जवाब दिया था- सारे जहां से अच्छा। अब महोदय, जिसने यह लिखा तराने-ए-हिन्द वे लिखनेवाले थे अल्लामा इकबाल। यह जानकारी होनी चाहिए। आप जय हिन्द का नारा लगाते हैं, हमलोग हर भाषण के अंत में जयहिन्द बोलते हैं उसको लिखनेवाला कौन था आबिद हसन सफरानी जी। जयहिन्द का सम्मान होना चाहिए एकदम होना चाहिए, क्यों नहीं होना चाहिए, सारे जहां से अच्छा का सम्मान होना उसका अपमान क्यों, उसका सम्मान क्यों नहीं? हम तो जो जानकारी लिये हैं वह आपको दे रहे हैं,अब अच्छी बात जो लगे हमसे ले लीजिए बेकार का तो यहां कोई जगह ही नहीं है। इसलिए हम यह कहना चाहते हैं महोदय, आप जिस तिरंगे की बात करते हैं उस तिरंगे को जो रूप दिया गया वह सुरैय्या तैयब जी ने देने का काम किया। सरफरोशी की तमन्ना अब हमारे दिल में है, देखना है जोर कितना बाजू-ए-कातिल में है। यह किसने लिखा भाई- बिस्मिल अजीमाबादी ने। इन्कलाब जिंदाबाद-मौलाना हसरत मोहानी जी ने। अंग्रेजों भारत छोड़ो, साइमन गो बैक किसने बोला भैय्या- यूसुफ मैहर साहब जी ने, यूसुफ मैहर अली साहब जी ने बोला। अब बताइये इसमें क्या गलत है? हमने तो शुरू में यही कहा कि देश की आजादी में सब लोगों ने बलिदान दिया और जो क्रांति का आगाज हुआ, बिना नारा के हमलोग कोई चुनाव लड़ लेते हैं क्या? कोई मूवमेंट चलता है क्या? ये नारा देनेवाले कौन लोग थे भाई? ये हमारे भाई थे, हमारे बुजुर्ग थे, इस देश के नागरिक थे और तो हम बहुत नाम ए.पी.जे. अब्दुल कलाम नहीं होते तो मिसाइल बनता क्या इस देश में? इसमें कोई गलत बात हमने नहीं कही महोदय, इसपर कोई आपलोग टीका-टिप्पणी मत कीजिए, बस जानकारी लीजिए। हम कहां जा रहे हैं? हमें बात करनी चाहिए पढ़ाई, दवाई, कमाई, सिंचाई, सुनवाई, कार्रवाई वाली। हम क्या बात कर रहे हैं कहां हम जा रहे हैं। क्या आपका मेरा भविष्य सुधरेगा, हमारी आनेवाली पीढ़ी का भविष्य सुधरेगा? क्या हम आपस में लड़ेंगे तो देश तरक्की करेगा? नहीं हो सकता इसीलिए हमने आपलोगों के बीच इस बात को संयमित ढंग से रखा। नहीं तो कोई लोग कूद जाता है वेल में, कोई लोग कुछ भी बोलता है और यहां तो दल बदलते रहता है, जहां जिसको टिकट का मौका मिला वहां चले जाते हैं। आप कल को अपने आप को नहीं कोसें, जो स्थिति यहां हुई है वह स्थिति आपलोगों की न आये।

अध्यक्ष महोदय, बिहार के जो अल्पसंख्यक हमारे मुसलमान महापुरुष थे उनका जिक्र कर लेते हैं। अब यहां मो. युनूस जो थे 1937 में जब पहला चुनाव हुआ था तो उस समय बिहार का मुख्यमंत्री शब्द नहीं था चीफ मिनिस्टर नहीं था, प्राइम मिनिस्टर बोलते थे तो पहला प्रिमियर बिहार का कोई बना था तो मो. युनूस साहब बने थे और अब्दुल कयूम अंसारी जी जो स्वतंत्रता सेनानी रहे हैं, जो टू नेशन थ्योरी के खिलाफ थे यानी जिन्ना के खिलाफ थे अब्दुल कयूम अंसारी जी। (व्यवधान)...

अरे फिर देखिये इस तरह की बात करेंगे न फिर कौन-कौन क्या है फिर वह बात खुलकर आएगी, किसकी कब गिरफ्तारी हुई, क्या हुआ? तो इसमें क्यों जाना। थोड़ा सकारात्मक होइये,

आगे बढ़िये।... अध्यक्ष महोदय, मौलाना मजहरूल हक साहब फ्रीडम फाइटर रहे हैं, सूफी संत मकदूम शाह, हजरत मकदूम शाह दौलत, बत्तख मियां, अगर बत्तख मियां नहीं होते तो गांधी जी जीवित नहीं होते, अंग्रेजों ने प्लान बना रखा था। वह तो जीवनदाता हैं हमारे नेशनल फादर के, गांधी जी के, उनको हमलोग कैसे भूल सकते हैं ? महोदय, हम इसी पर कहना चाहेंगे एक शायरी है।...आपने तो सारा सुन लिया किसकी कितनी देन है, क्या है, नहीं है। इस देश के लिए कुर्बानी देने में जितना आपलोग आगे थे तो हमलोग थोड़े ही कम पीछे हैं, हमलोग भी आगे हैं। इसलिए बात समझिये आपलोग।

"जब पड़ा वक्त गुलिस्तां पे तो खून हमने दिया,
जब बहार आई तो कहते हैं तेरे काम नहीं।"

अध्यक्ष महोदय, एक मशहूर शायर का अभी कुछ साल पहले निधन हुआ है। मशहूर शायद राहत इंदौरी साहब कहते थे :

"है शामिल सबका खून इस मिट्टी में,
किसी के बाप का हिन्दुस्तान थोड़ी है।"

महोदय, ये सब इतने बड़े-बड़े लोग, महापुरुष हिन्दू, मुस्लिम, सिख, ईसाई और जो बहुसंख्यक हैं उनकी तो बहुत बड़ी-बड़ी जिम्मेवारी बनती है। देश की अखंडता को लेकर। (व्यवधान)

अध्यक्ष महोदय, बूझे वाला बूझता कि पीतल है कि सोना है। जनता समझदार हैं, लोग सब समझ रहे हैं कि कौन क्या है? इस पर हमको ज्यादा टीका-टिप्पणी नहीं करनी और न किसी को करनी चाहिए। महोदय, हमको याद है कि मुख्यमंत्री जी ने इसी चेयर पर बैठकर बोला था कि हस्तक्षेप ज्यादा बढ़ गया है। लोग हस्तक्षेप ज्यादा करने लगे हैं इसलिए हमलोग गठबंधन बदल लेते हैं, थोड़ी शॉपिंग कर लेते हैं, बदल लेते हैं। अब हमने जितना कांट्रस्टिंग, कैरेक्टर, आइडियोलॉजी और कितना कांट्रस्टिंग स्टेटमेंट न्यूज कटिंग का आप लोगों के सामने रखा। अब समझ में आ रहा होगा कि किसका कितना हस्तक्षेप है। महोदय, मुख्यमंत्री जी के लिए ऐसी शर्तों पर क्या सुलतान बनना, जहां सहयोगी ही जानबूझकर प्रतिदिन लानत और मलानत करते हो।

महोदय, रेणुजी अभी आई, लेकिन ये बोलती हैं कि बिहार को विशेष राज्य का दर्जा, पैकेज बहुत मिल....(व्यवधान)

महोदय, मुख्यमंत्री जी कहते हैं नीति आयोग ने घोषणा कर दी तो विशेष पैकेज दे दो। महोदय, हम ये कहना चाहते हैं कि अब मुख्यमंत्रीी जी को अहसास हो रहा होगा और उनको हम यह बताना चाहते हैं कि– "शतरंज में वजीर और जिन्दगी में जमीर अगर मर जाए तो खेल खत्म समझो।"

महोदय, सच्चाई है मैं समझता हूं कि समय के साथ सबको अहसास होगा लेकिन एक बात है,...मुख्यमंत्री जी को लगता होगा कि एक गलत समझौता, सौ गलत समझौते कराता है। महोदय, बेरोजगारी 19 लाख कहां गया? आपलोगों ने पढ़ा या सुना। राज्यपाल महामहिम के अभिभाषण पर। कोई रूपरेखा तो बताओ कि नौजवानों को हमने जो वादा किया था कि हम 19 लाख रोजगार देंगे। कैसे दीजिएगा, कब दीजिएगा, उसका ब्लूप्रिंट क्या है, कुछ तो बताइये? सारा रिक्त पड़ा हुआ है। अभी शिक्षा विभाग के मंत्री जी से हम पूछे तो बताएंगे कि रिक्त पड़ा हुआ है या नहीं पड़ा हुआ? वे बोलेंगे हां रिक्त पड़ा हुआ है लेकिन प्रक्रिया में है। यही बात बोलेंगे और कुछ नहीं। वह प्रक्रिया कितने सालों से चल रही है। हुजूर, 15 साल, 16 साल आप लोग डबल इंजन, बबल इंजन, ट्रबल इंजन क्या किये? लोग तो यह पूछना चाहते हैं मंहगाई पर कोई जिक्र नहीं।बीजेपी के लोग, सब लोगों के लिए अच्छी बात है। प्रोटेस्ट होना चाहिए। महंगाई होती थी, तो प्याज की माला पहनकर बोला जाता था कि- महंगाई डायन खाई जात है, अब इनकीनी के महंगाई भोजाई लगत हय। महोदय, महंगाई कितनी बढ़ गई, पेट्रोल-डीजल कितना बढ़ गया, चूल्हा-गैस कितना बढ़ गया। आज जो घर खर्च से पूरी मिडिल क्लास फैमिली प्रभावित हो गयी है, गरीब की तो छोड़िये। किसान को यूरिया नहीं मिल रहा, मिल रहा है तो कितना महंगा मिल रहा है। क्या गजब परिस्थिति बनी हुई है, अराजकता फैली हुई है।

शराबबंदी बंद हुई, चलो नशामुक्त होना चाहिए, करना चाहिए, लेकिन टीचर्स को भी इसमें लगा दिया गया, टीचर्स को बोला जा रहा है कि जाओ, अगर कोई आपको लगे कि कोई पिया है तो हमको बताओ। अब बताइये, टीचर का काम क्या है? बच्चों को पढ़ाना। अब ये काम क्या करे?

महोदय, पूरे तरीके से हर जगह माहौल खराब है। अब शराबबंदी बंद हुई, चलो नशामुक्त होना चाहिए, करना चाहिए, लेकिन टीचर्स को भी इसमें लगा दिया गया, टीचर्स को बोला जा रहा है कि जाओ, अगर कोई आपको लगे कि कोई पिया है तो हमको बताओ। अब बताइये, टीचर का काम क्या है? बच्चों को पढ़ाना। अब ये काम क्या करे? अब टीचर बाहर जाएगा तो थुराई तो होगी न। पुलिस अपना काम ढंग से नहीं कर पा रही है और कितनी स्टेटमेंट मंत्री, एम.एल.ए., आप ही लोगों की है। महोदय, आपकी है पुलिस 100 बोतल बताती है और पांच बोतल दिखाती है। यह तो सच्चाई है, कहां है सुशासन? कहां हो रहा है कोई काम? आप देखेंगे कि ड्यूटी लगा देंगे हेलीकॉप्टर से ढूंढो, किसी से भी ढूंढो लेकिन प्रॉयरिटी क्या है भाई? आप शराब ढूंढने के लिए हेलीकॉप्टर, ड्रॉन मंगाएंगे लेकिन बच्चों को नौकरी नहीं देंगे। शिक्षा नहीं सुधरेंगे, स्वास्थ्य नहीं सुधरेंगे। दवा नहीं देंगे, सड़क, बिजली, पानी। बिहार में सबसे महंगी बिजली है, हम क्यों नहीं खुद का उत्पादन करते हैं। हम लेते हैं कहीं और से, इतनी महंगी बिजली है देश में सबसे महंगी बिजली हम बेचते हैं। कोई बता दे

यहां अगर हम झूठ बोल रहे हैं तो कोई बताओ देश में सबसे महंगी बिजली....(व्यवधान)।

अध्यक्ष महोदय, हम ये कह रहे हैं कि दिन-दहाड़े क्राइम बढ़ता जा रहा है, महोदय क्राइम में वृद्धि हो रही है। कोई सुनवाई, कोई कार्रवाई, चले जाइये तो किसी थाना में लेते ही नहीं हैं। महोदय, कितने ऐसे मामले हैं जनता मिलने आती है और बोलती है कि कोई कार्रवाई नहीं हुई और देखते हैं तो पूरा गरीब। गरीबों की बिहार में कोई सुनवाई नहीं हो रही है और महोदय, महामहिम राज्यपाल महोदय जब अभिभाषण दे रहे थे तो उसमें बता दीजिये कि कास्ट सेंसस का कहां था? जातीय जनगणना मिसिंग? कास्ट सेंसस वॉज मिसिंग। अब बताइये इसी हाउस से सब पार्टी के लोग हम पास किये थे दो-दो बार। आज वह नहीं है, उसकी चर्चा नहीं हुई। अब बताइये हमसे मीडिया वाले पूछते हैं कास्ट सेंसस के बारे में तो हम तो बोलते हैं भाई वैसे बैठक की तो कोई जरूरत थी नहीं केवल ऐलान करना था। लेकिन मुख्यमंत्री जी कहे कि बैठक कर लेंगे आल पार्टी मिलकर तो हमलोग उसका ऐलान कर देंगे। लेकिन वह बैठक तब हुई जब हम कुंवारे थे...अब आप देखिये, हम शादीशुदा हो गये, कुंवारे नहीं रहे और अब तक आल पार्टी मीटिंग मुख्यमंत्री जी ने नहीं बुलाई। आप डेट तय कर दीजिये। जिन लोगों को आना होगा आएंगे, जिन लोगों को नहीं आना होगा, नहीं आएंगे, बात खत्म।...यह बात जब हमने कही थी प्रधनमंत्री जी से मिलने के बाद प्रधानमंत्री जी को कि नेशनल इंटरेस्ट में है, राष्ट्रहित में है तो मुख्यमंत्री जी ने भी इस बात को दोहराया था। उन्होंने भी कहा था कि यह राष्ट्रहित में है। जब राष्ट्रहित में है तो फिर देरी किस बात की भाई, लेकिन आपके अभिभाषण में, महामहिम राज्यपाल के अभिभाषण में इसका कोई जिक्र नहीं था। महोदय, हर एक जगह, हर एक सेक्टर में, हर डिपार्टमेंट में राज्य सरकार फिसड्डी है, मतलब दीवारें खड़ी हैं लेकिन अंदर का जो मकान है ढह रहा है, ढेर हो रहा है। इसलिए महोदय, हमलोग कहते हैं कि यह जो डबल इंजन है वाकई में बिहार के लिए यह सरकार बोझ है। यह डबल इंजन है, गजब-गजब कॉन्ट्रोडिक्शन होता है महोदय, कोई कुछ कह रहा है, कोई कुछ कह रहा है, दिशाहीन एकदम लग रहा है कि बिहार में कोई है ही नहीं, जो बिहार को चलाने का काम कर रहा है, खाली है महोदय। आपलोग स्थिति को पूरी तरह जानते हैं,समझते हैं। महोदय, बजट भी हुआ, बजट पर वाद-विवाद भी परसों होगा, ज्यादा समय नहीं, हम अपनी बात को बाईंडअप करना चाहेंगे। भाई देखिए, यह देश की संस्कृति है, अलग-अलग संस्कृति है, अलग-अलग भाषा है, दिखने में हमलोग अलग-अलग हैं, बोली हम लोगों की अलग-अलग है, पहनावा हमलोगों का अलग-अलग है, खान-पान हमलोगों का अलग-अलग है लेकिन फिर भी हमलोग एक हैं और हमें गर्व है कि हमारी डायवरसिटी में हमारी एकता है, हमारी अनेकता में भी एकता है, इसलिए हमारा देश महान है। इस बात को समझिए और हमलोग पॉजिटिव राजनीति करें। देश की जनता और बिहार की जनता को उम्मीद है। पहले स्पीकर महोदय कहा करते थे कि झूठ मत बोलिये तो हम बोलने लगें कि चलिये, झूठ नहीं अब असत्य कहेंगे। ...असत्य। आपने कहा कि चोर दरवाजे वाली सरकार मत बोलो, तो हम बोले चलो चोर दरवाजे वाली नहीं लेकिन उसके लिए तो आपने बताया नहीं कि क्या बोलें? (व्यवधान)..

अध्यक्ष महोदय, सुझाव के रूप में हमलोगों ने कटौती दिया है। अभिभाषण पर कटौती हमारे जो साथी हैं विपक्ष के उन सबलोगों ने दिया है। ऐसा नहीं है कि हमलोग सुझाव देने में पीछे हैं। हमलोग तो हर चीज का ध्यान रखते हैं, हर काम करते हैं, ऐसा नहीं है, हम सबकी चिंता करते हैं और हमलोग जात की नहीं जमात की राजनीति करते हैं। महोदय, हम सबलोगों का, विपक्ष के लोगों का यही है कि भाई पढ़ाई, दवाई, कमाई, सिंचाई, सुनवाई, कार्रवाई, लोकतंत्र पर बोलें, कास्ट सेंसेस पर बोलें। जो ज्वलंत मुद्दे हैं सरकार उसी पर गौर करे नहीं तो राज्यपाल महोदय का, महामहिम का जो अभिभाषण है आप मंगा लीजिए, मेरे पास रखा हुआ है मेरे चेम्बर में, पिछले तीन-चार साल का मंगा लीजिए एक ही भाषण है और एक ही भाषण को वह पढ़े जा रहे हैं। जो अधिकारी देते हैं उसे वे पढ़ते हैं बाकी तो जो सच है वह जनता जानती है, क्योंकि जनता तो जमीन पर रहकर हर एक चीज को देख रही है, आकलन कर रही है। हम आपको धन्यवाद देंगे कि आपने हमको पूरा समय दिया और शाहनवाज जी को हम धन्यवाद देते हैं कि हमारे पक्ष में आकर आप कम-से-कम बोले तो। सुब्हानी साहब को भी राइट है वोटिंग का, मत भूलिएगा, चीफ सेक्रेटरी आफ बिहार, ऐसी बातें नहीं होनी चाहिए। कौन किसका, ले लो, दे दो ऐसी बातें एकदम नहीं होनी चाहिए। महोदय, एक चीज है अबतक सरकार में 80 से ज्यादा घोटाले हो गए, एक पर भी कार्रवाई नहीं होती है, भ्रष्टाचार के इतने आरोप लगते हैं, लेकिन सुनवाई नहीं होती है। सीएजी रिपोर्ट में भी दो लाख करोड़ रुपये को कोई हिसाब-किताब नहीं है। जितने भी विधायक जी हैं सत्ता पक्ष के विपक्ष के सब लोग यहां बैठे हुए हैं, हम कई मंत्रियों से अपेक्षा करते हैं कि इरीगेशन का काम हो जाए, रोड बन जाए, पुल बन जाए, पुलिया बन जाए तो मंत्री का जवाब आता है क्या? निधि की उपलब्धता पर, पूछिएगा मंत्री जी से कि दो लाख करोड़ रुपये का हिसाब जल्दी दे दीजिए ताकि हमलोगों का रोड, पुल, नल नाला ये सब बनने को काम हो। आपको धन्यवाद देते हैं महोदय। अंतिम में, जो तकनीकी सेवा आयोग द्वारा छह हजार जूनियर इंजीनियर्स की वर्ष 2019 से बहाली की प्रक्रिया चल रही है, तीन साल बाद भी अब तक बहाली सरकार नहीं कर पाई है। इसपर भी सरकार को ध्यान रखने की जरूरत है। हमलोग उम्मीद करेंगे कि सत्ता पक्ष या सरकार का जो उत्तर आये, जिन मुद्दों को हमने उठाया है अपनी बात न करके विपक्ष को सटिस्फाई करने का काम करें, क्योंकि हमलोगों ने जो मुद्दे उठाये हैं बिहार की जनता के हित के मुद्दे हैं और बिहार की जनता की आवाज है। बहुत-बहुत धन्यवाद! जय हिन्द!

(राज्यपाल के अभिभाषण के धन्यवाद प्रस्ताव हुए वाद-विवाद पर, नेता प्रतिपक्ष का 2 मार्च, 2022 को बिहार विधानसभा में दिए गए भाषण का संपादित अंश) ■

अमेरिकी कॉलेज का प्रतिरोध

प्रमोद रंजन

(संयुक्त राज्य अमेरिका में रंगभेद का इतिहास कई सौ साल पुराना है। "राजद समाचार" में क्लू क्लक्स क्लान और सोजर्नर ट्रुथ के बारे में हम लेख प्रकाशित कर चुके हैं। यह 2022 भारत में दलित पैंथर की स्थापना का स्वर्णजयंती वर्ष है। 1972 में महाराष्ट्र के युवा दलितों ने अमेरिकन ब्लैक पैंथर की तर्ज पर दलित पैंथर का संगठन किया था। मराठी कवियों के एक ग्रुप ने इसी समय दलित साहित्य आन्दोलन खड़ा किया था। भारत में दलित आन्दोलन के स्वर्णजयन्ती के उपलक्ष्य में हम यह लेख खास तौर पर प्रकाशित कर रहे हैं। -संपादक)

अमेरिका के स्टेट यूनिवर्सिटी ऑफ़ न्यूयॉर्क के ब्रॉकपोर्ट कॉलेज के लिए मार्च, 2022 बहुत गहमागहमी भरा रहा। कॉलेज पर श्वेत समुदाय के राजनीतिज्ञों और अखबारों ने तीखे हमले किए। इन हमलों का कारण ब्रॉकपोर्ट कॉलेज द्वारा 'ब्लैक पैंथर' के एक सजायाफ्ता बौद्धिक को व्याख्यान के लिए आमंत्रित किया जाना है।

गौरतलब है कि ब्लैक पैंथर की प्रेरणा से ही भारत में सन् 1972 में 'दलित पैंथर' की स्थापना हुई थी। ब्लैक पैंथर के योद्धाओं के विचार भारतीय दलित पैंथर के लिए प्रकाश-स्तंभ की तरह रहे हैं। ब्रॉकपोर्ट कॉलेज की घटना के कुछ अन्य संदर्भ भी भारत से जुड़ते हैं। भारतीय उच्च अध्ययन संस्थानों में विमर्श और अभिव्यक्ति की आजादी को बुरी तरह कुचला जा रहा है। पिछले कुछ वर्षों में यहां ऐसी घटनाओं की संख्या तेजी से बढ़ी है, जब शासक-कौम के विचारों के विरोधी बौद्धिकों को आमंत्रित किए जाने पर कार्यक्रमों को रद्द किया गया है। भारत के उच्च अध्ययन संस्थानों की अपनी नैतिक शक्ति इतनी कमजोर रही है कि वे ऐसे मामले में चूं तक नहीं बोल पाते हैं। जबकि ब्रॉकपोर्ट कॉलेज ने अपनी स्वायत्तता के पक्ष में राजनीतिज्ञों और शासक कौम का डट कर मुकाबला किया।

क्या है मामला?

ब्रॉकपोर्ट कॉलेज में ब्लैक पैंथर के पूर्व सदस्य जलील अब्दुल मुंतकीम को वक्ता के तौर पर आमंत्रित किया गया है। कार्यक्रम 6 अप्रैल को ऑनलाइन है।

जलील को 1971 में दो पुलिस कर्मियों की हत्या के आरोप में गिरफ्तार किया गया था और उन्हें दोनों पुलिस कर्मियों की हत्या के लिए अलग-अलग 25-25 साल की सजा हुई थी। लगभग 50 साल की सजा काटने के बाद जलील 7 अक्टूबर, 2020 में पेरोल पर रिहा हुए हैं। वे अमेरिका समेत संभवतः दुनिया के किसी भी लोकतंत्र में सबसे लंबी जेल काटने वाले व्यक्ति हैं।

जलील की जीवन-यात्रा लोमहर्षक रही है। उनका जन्म 18 अक्टूबर, 1951 को कैलिफोर्निया के ओकलैंड में हुआ तथा सैन फ्रांसिस्को में पले-बढ़े। बचपन का अधिकांश हिस्सा मां के साथ गुजरा, जो अफ्रीकन नृत्य की विद्यार्थी थीं, तथा अश्वेत समुदाय पर होने वाले अत्याचार का विरोध करने के लिए चर्चित संगठन 'नेशनल एसोशिएशन फॉर द एडवांसमेंट ऑफ कलर्ड पीपुल' (एनएएसीपी) की सदस्य भी थीं। जलील और उनके अश्वेत समुदाय के लोगों को अपमानजनक ढंग से "निग्गर" (हब्शी, काला आदमी) कह कर संबोधित किया जाता था। स्कूल बस का ड्राइवर उन्हें उनकी चमड़ी के रंग के कारण बस की सबसे पिछली सीट पर बैठने के लिए मजबूर करता था। उनका बचपन ठीक वैसे ही गुजरा जैसा उस समय किसी भारतीय अछूत का बचपन हुआ करता था। पल-पल पर अपमान, भेदभाव और हर स्तर पर उपेक्षा, उनकी और उनके समुदाय की नियति थी।

जलील के जीवन में बड़ा मोड़ 1967 में आया। उस साल 2 मई को राइफल और पिस्तौलों से लैस, काला चश्मा, चमड़े की जैकेट और ब्रेसलेट पहने ब्लैक पैंथर पार्टी के 30 युवाओं ने कैलिफोर्निया विधानसभा पर कब्जा कर लिया था। उस समय कैलिफोर्निया विधानसभा में एक कानून पास होना था, जिसके तहत शस्त्र लेकर चलना अवैध घोषित किया जाने वाला था। इस कानून का असली उद्देश्य ब्लैक पैंथर्स को निःशस्त्र करना था, जो उन दिनों अपने विचारों और हथियारों के कारण कैलिफोर्निया और आसपास के इलाकों में तेजी से फैल रहे थे।

जलील इस समय 16 वर्ष के थे। इस घटना में उन्हें आशा की किरण दिखाई दी और वे ब्लैक पैंथर पार्टी से जुड़ गए।

उसके अगले साल मार्टिन लूथर किंग, जूनियर की हत्या कर दी गई; उसके एक साल बाद, शिकागो में कानून-प्रवर्तन अधिकारियों ने इक्कीस वर्षीय ब्लैक पैंथर फ्रेड हैम्पटन की हत्या कर दी। इन घटनाओं ने 18 वर्षीय मुंतकीम जलील को गहराई से उद्वेलित किया। इसी समय वे ब्लैक पैंथर पार्टी के अंडर ग्राउंड संगठन 'ब्लैक लिबरेशन आर्मी' के सदस्य के रूप में चुन लिए गए। 'ब्लैक लिबरेशन आर्मी' पर पुलिसकर्मियों पर हमला करने के अतिरिक्त डकैती करने और अनेक जगहों पर बम फेंकने के आरोप रहे हैं।

21 मई, 1971 को लिबरेशन आर्मी ने न्यूयॉर्क पुलिस के दो अधिकारियों जोसेफ पियाजेंटिनी और वेवर्ली जोन्स की घात लगा कर हत्या कर दी। इनमें से जोसेफ पियाजेंटिनी श्वेत समुदाय के थे, जबकि वेवर्ली जोन्स अश्वेत थे।

इस हत्याकांड से कुछ समय पहले समाचार पत्र 'द न्यूयॉर्क टाइम्स' को ब्लैक लिबरेशन आर्मी की ओर से एक पैकेट मिला

था, जिसमें एक बुलेट के साथ प्रेस नोट रखा था। प्रेस नोट में लिखा था कि "हम इसे (बुलेट को) क्रांतिकारी न्याय प्राप्त करने के लिए उत्पीड़ित लोगों की संभावित शक्ति का प्रदर्शन करने के लिए भेज रहे हैं। इस नस्लवाद सरकार के हथियारबंद गुंडे तीसरी दुनिया के उत्पीड़ित लोगों की बंदूकों के निशाने पर तब तक आते रहेंगे, जब तक वे हमारे समुदाय पर आधिपत्य जमाना और अमेरिकी कानून और व्यवस्था के नाम पर हमारे भाइयों और बहनों की हत्या करना बंद नहीं करते। हम क्रांतिकारी न्याय का विश्वास रखते हैं। हमारा नारा है कि समस्त अधिकार आम जनता के पास हों!"

इन पुलिसकर्मियों की हत्या का आरोप जलील अब्दुल मुंतकीम, जो उस समय तक 'एंथोनी जलील बॉटम' के नाम से जाने जाते थे, और उनके साथियों पर लगा।

मुकदमा चला और गवाहों के विरोधाभासी बयानों के बीच उन्हें सजा हुई। सजा में कहा गया था कि 25 वर्ष बाद उन्हें पेरोल पर रिहा किया जा सकेगा। इस सजा के अनुसार वे 1993 में ही पेरोल पर रिहा किए जाने के पात्र हो गए थे। लेकिन श्वेत समुदाय के नस्लवादी राजनीतिज्ञों, न्यूयार्क सिटी के पुलिसकर्मियों के संगठन और मारे गए पुलिसकर्मियों के परिजनों के विरोध के कारण उनके पेरोल की अर्जी 11 बार खारिज की गई। जब-जब उनकी रिहाई की अर्जी पेरोल बोर्ड के पास जाती श्वेत-श्रेष्ठतावादियों की ओर से उसे खारिज करवाने के लिए तीव्र अभियान चलाया जाता है। बोर्ड को हजारों की संख्या में चिट्ठियां भेजी जातीं तथा श्वेत राजनेताओं के बयान आते, जिनमें जलील को न्यायसंगत रूप से मिलने वाले पेरोल का विरोध किया जाता।

दूसरी ओर, अनेक नागरिक अधिकार संगठन तथा प्रगतिशील लोग उनकी रिहाई के पक्षधर थे।

अंततः जलील की रिहाई तब हुई, जब वे अपनी अधिकांश सजा काट चुके थे। इस प्रकरण का एक प्रेरक पहलू यह भी है कि उक्त हत्याकांड में मारे गए अश्वेत पुलिसकर्मी वेवर्ली जोन्स के पुत्र जूनियर वेवर्ली जोन्स ने उनकी रिहाई का पक्ष लिया। उन्होंने पेरोल बोर्ड के समक्ष पेश होकर कहा कि इस हत्याकांड को भयावह नस्लवाद के उस दौर के 'ऐतिहासिक संदर्भ' में ही देखा जाना चाहिए।

जेल में रहते हुए जलील ने धर्म परिवर्तन किया। वे एंथोनी जलील बॉटम से जलील अब्दुल मुंतकीम बने तथा उनकी पहचान एक शिक्षाविद् और नागरिक अधिकार कार्यकर्ता के रूप में बनी। वे कैदियों के अधिकारों के लिए निरंतर संघर्षरत रहे तथा नस्लवाद के प्रतिरोध में अनेक सैद्धांतिक लेख लिखे। जेल में लिखी गई उनकी पुस्तक "We Are Our Own Liberators" (हम अपने मुक्तिदाता स्वयं हैं) शीर्षक से प्रकाशित हुई है।

जेल अधिकारियों ने उन्हें कैदियों को ब्लैक-इतिहास की शिक्षा देने के लिए प्रताड़ित किया महीनों तक एकांत काल-कोठरी में डाल कर रखा। लेकिन वे अपनी विचारधारा से कभी नहीं डिगे। जेल में रहते हुए कुछ पत्रकारों ने उनसे मुलाकात कर भेंटवार्तायें प्रकाशित कीं। इन भेंट वार्ताओं में वे अपनी विचारधारा के विभिन्न पहलुओं को स्पष्ट करने की कोशिश करते दिखते हैं।

जलील अब्दुल मुंतकीम के संघर्षों की कथा पढ़ते हुए भारत के हिंदूवादी नेता विनायक दामोदर सावरकर की याद आती है। जाहिर है, सावरकर और जलील की विचारधारा एक दूसरे से बिल्कुल भिन्न है। सावरकर भारत के द्विज-श्रेष्ठतावादियों के प्रतिनिधि थे, जो सामाजिक रूप से श्वेत-श्रेष्ठतावादियों के समकक्ष हैं। जलील और सावरकर में समानता महज इतनी है कि 1910 में सावरकार को भी एक अधिकारी की हत्या में 50 साल की सजा हुई थी। लेकिन वे एक साल के भीतर ही अपनी रिहाई के लिए उन्हीं अंग्रेजों की "भलमनसाहत और दयालुता" की दुहाई देते हुए वादा करने लगे थे कि अगर उन्हें माफ कर दिया जाता है तो वे आजीवन अंग्रेजों के कट्टर समर्थक रहेंगे। दूसरी ओर, जलील सरकार के सामने कभी नहीं झुके, न ही कभी माफी मांगी।

बहरहाल, यूनिवर्सिटी ऑफ़ न्यूयॉर्क के ब्रॉकपोर्ट कॉलेज जलील अब्दुल मुंतकीम के व्याख्यान का शीर्षक था "ब्लैक प्रतिरोध का इतिहास, अमेरिकी राजनीतिक कैदी और नरसंहार : जलील मुंतकीम के साथ एक वार्तालाप"।

कॉलेज की वेबसाइट पर इस आयोजन के बारे में जानकारी देते हुए जलील का परिचय एक राजनीतिक कैदी के रूप में दिया गया था। कार्यक्रम की सूचना फैलते ही श्वेत-श्रेष्ठतावादियों ने कॉलेज पर इसे रद्द करने के लिए चारों ओर से दबाव बनाना शुरू कर दिया। कॉलेज को हजारों ईमेल भेजे गए। अनेक राजनीतिज्ञों और पुलिस अधिकारियों ने इसे रद्द करने के लिए सख्त शब्दों में लिखा। उन्होंने जलील को 'राजनैतिक कैदी' कहे जाने पर भी विरोध किया तथा कहा कि कानूनी रूप से वह महज एक खूनी है, जिसके व्याख्यान पर सरकारी धन बर्बाद किया जा रहा है। कॉलेज के भीतर विद्यार्थियों के भी एक समूह ने इस आयोजन का विरोध किया।

लेकिन, कॉलेज ने इन विरोधों के आगे सर झुकाने से इंकार कर दिया।

कॉलेज ने अपनी वेबसाइट पर इन विरोधों का संज्ञान लेते हुए लिखा कि जलील अब्दुल मुंतकीम कॉलेज के 'एक संकाय सदस्य' के आमंत्रण पर व्याख्यान देने आ रहे हैं तथा "अकादमिक स्वतंत्रता की हमारी अवधारणा हमारे हर संकाय-सदस्य को छात्रों को संबोधित करने के लिए अपनी पसंद के मेहमानों को आमंत्रित करने के लिए बहुत अधिक स्वायत्तता प्रदान करती है। हम अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता में विश्वास करते हैं और आलोचनात्मक और सम्मानजनक संवाद में शामिल होने के लिए विभिन्न समुदायों को प्रोत्साहित करना जारी रखना चाहते हैं। हमने नियमित रूप से विभिन्न पृष्ठभूमियों और दृष्टिकोणों के वक्ताओं को शामिल करते हुए भाषण कार्यक्रम आयोजित किए हैं, और आगे भी करते रहेंगे।"

कॉलेज की वेबसाइट पर इस संबंध में दी गई जानकारियों का सबसे रोचक पहलू कार्यक्रम का विरोध करने वाले अपने 'कैंपस-समुदाय' को दी गई सलाह है। कॉलेज ने लिखा है कि "हम इस बात को स्वीकार करते हैं कि इस कार्यक्रम में तीव्र भावनात्मक प्रतिक्रिया को जन्म देने की क्षमता है। कुछ लोगों के लिए यह पुराने जख्मों के हरा हो जाने जैसा भी हो सकता है। इस कार्यक्रम के कारण हमारे कैंपस के जिन लोगों पर ऐसी प्रतिक्रिया होती है, वे उससे निपटने के लिए कैंपस में उपलब्ध मानसिक स्वास्थ्य संसाधनों की मदद ले सकते हैं।" इस सूचना के बाद कॉलेज के मानसिक स्वास्थ्य सलाह केंद्र का फोन, पता आदि देते हुए बताया गया है कि इस केंद्र पर मानसिक स्वास्थ्य संबंधी सलाह के लिए पहले से समय लेने की भी आवश्यकता नहीं है। जब आप की भावनाएं असहज हों, आप वहां जा सकते हैं। "भावनाओं के आहत" होने संबंधी आरोपों का इससे उपयुक्त और संयत उत्तर शायद कोई और नहीं हो सकता।

जाहिर है, भारतीय उच्च अध्ययन संस्थान ऐसा उत्तर देने के बारे में सपने में भी क्यों नहीं सोच सकते। क्या इसका कारण महज यह है कि मौजूदा दौर में भारत में दमन की आंच बहुत तेज है? या इसका कारण हमारे संस्थानों की प्रशासनिक और आर्थिक संरचना में निहित है, जो सरकार पर अतिशय निर्भर है, या फिर इन संस्थानों की सामाजिक संरचना में है, जो कि मुख्य रूप से द्विज-जातियों से बनी है? या तीनों में?■

(प्रमोद रंजन पत्रकार और शिक्षाविद् हैं)

14 अप्रैल : बाबासाहब जयन्ती

भारत का पहला दलित नेता

क्रिस्तोफ जाफ्रलो

बाबासाहब के फिर अन्तिम दर्शन हुए उनके अन्त समय में ही। सुबह मैं हमेशा की तरह अपने काम पर निकला। अखबारों के पहले पेज पर ही खबर छपी थी। धरती फटने-सा एहसास हुआ। इतना शोकाकुल हो गया, जैसे घर के किसी सदस्य की मृत्यु हुई हो। घर की चौखट पकड़कर रोने लगा। माँ को, पत्नी को कुछ समझ में नहीं आ रहा था कि मैं इस तरह पेपर पढ़ते ही क्यों रोने लगा? घर के लोगों को बताते ही सब रोने लगे। बाहर निकलकर देखता हूँ कि लोग जत्थों में बातें कर रहे हैं। बाबासाहब का निधन दिल्ली में हुआ था। शाम तक विमान से उनका शव आनेवाला था। नौकरी लगे दो-तीन महीने ही हुए होंगे। छुट्टी मंजूर करवाने वेटरनरी कॉलेज गया। अर्जी का कारण देखते ही साहब झल्लाए। बोले, "अरे, छुट्टी की अर्जी में यह कारण क्यों लिखता है? आंबेडकर राजनीतिक नेता थे और तू एक सरकारी नौकर है। कुछ प्राइवेट कारण लिख।" वैसे मैं स्वभाव से बड़ा शान्त । परन्तु उस दिन अर्जी का कारण नहीं बदला। उलटे साहब को कहा, "साहब, वे हमारे घर के एक सदस्य ही थे। कितनी, अँधेरी गुफ़ाओं से उन्होंने हमें बाहर निकाला, यह आपको क्यों मालूम होने लगा?" मेरी नौकरी का क्या होगा, छुट्टी मंजूर होगी या नहीं, इसकी चिन्ता किए बिना मैं राजगृह की ओर भागता हूँ। ज्यों बाढ़ आई हो, ठीक उसी तरह लोग राजगृह के मैदान में जमा हो रहे थे। इस दुर्घटना ने सारे महाराष्ट्र में खलबली मचा दी। (दया पवार, अछूत, पृष्ठ संख्या 168-169)

महाराष्ट्र के प्रसिद्ध दलित लेखक दया पवार के इस मर्मस्पर्शी संस्मरण से आंबेडकर के किसी निकट सहयोगी के जुड़ाव का एहसास हमें नहीं मिलता। पवार आंबेडकर के राजनीतिक आन्दोलन में तो सक्रिय थे मगर व्यक्तिगत रूप से उन्हें जानते नहीं थे। न ही उनका यह संस्मरण बम्बई के उस मुट्ठी भर सम्पन्न अस्पृश्य तबके की भावनाओं को दर्शाता है जिसके बीच आंबेडकर का ज्यादातर जीवन गुज़रा था। आंबेडकर के अन्तिम संस्कार में न केवल विशाल जनसमूह ने हिस्सा लिया-जैसा कि पवार इशारा कर रहे हैं बल्कि उनके अन्तिम संस्कार के साथ पूरे भारत में शोक और सहानुभूति की एक लहर दौड़ गई थी।आंबेडकर का प्रभाव अब सिर्फ महाराष्ट्र की सीमाओं तक महदूद नहीं था। यह बात उत्तरी भारत में भी उनके द्वारा स्थापित राजनीतिक पार्टियों की चुनावी सफलताओं से स्पष्ट हो जाती थी। मराठी के अलावा कई भारतीय भाषाओं में भी उनकी ज्यादातर रचनाओं के असंख्य संस्करण छप चुके थे। आंबेडकर सही मायनों में एक अखिल भारतीय शख्सियत बन चुके थे। वह निर्विवाद रूप से समूचे भारत में प्रभाव रखने वाले पहले अस्पृश्य' नेता थे। ख्याति व प्रतिष्ठा के मामले में उनके निकटतम सहयोगी भी उनके आसपास नहीं पहुँचते थे।

ऐसे हालात में यह सोचने की बात है कि उनके जीवन, काम और उनके चिन्तन पर इतने कम अध्ययन क्यों हुए हैं? साल 2000 में भी उपेन्द्र बख्शी

को लिखना पड़ा कि 'आंबेडकर सिरे से विस्मृत व्यक्तित्व हैं।' इस उपेक्षा का सबसे स्पष्ट संकेत यह है कि 1990 के दशक तक भी उन पर केन्द्रित किताबें गिनती भर की थीं। और तो और, सारे क्षेत्रीय कांग्रेसी नेताओं की भी एकाधिक जीवनियाँ लिखी जा चुकी हैं जबकि गांधी और नेहरू पर लिखी गई किताबों की तो गिनती ही छोड़ दीजिए। मगर, अंग्रेजी में आंबेडकर के बारे में लिखी गई स्तरीय किताबें बहुत कम रही हैं। आंबेडकर की संकलित रचनाओं का प्रकाशन भी सत्तर के दशक में जाकर शुरू हुआ जबकि गांधी, नेहरू और पंत की संकलित रचनाएँ इससे बहुत पहले प्रकाशित होने लगी थीं।

इस विसंगति के लिए आंशिक रूप से तो भारतीय समाज विज्ञान के दायरे में जीवनी लेखन के सीमित प्रचलन को ज़िम्मेदार ठहराया जा सकता है और आंशिक रूप से इसका कारण ये रहा है कि आज भी भारतीय सत्ता प्रतिष्ठान के भीतर आंबेडकर एक अस्वीकार्य-यहाँ तक कि भयजनक-प्रतीक हैं। इसके पीछे बहिष्कार या तिरस्कार का भाव भी रहा है जिसे इस आरोप से खुराक मिलती रही है कि आंबेडकर तो अंग्रेजों के हामी और साथी थे। सारा श्रेय आज भी स्वतंत्रता आन्दोलन के नेताओं को ही मिलता है। आंबेडकर का संघर्ष इससे अलग था मगर इससे कम महत्त्वपूर्ण नहीं था।

दूर से देखने पर आंबेडकर का जीवन साधारण साधनों के सहारे अपने दम पर तरक्की के शिखरों को छूने वाले नायकों की परिकथा जैसा लगता है। भीमराव आंबेडकर का जन्म 14 अप्रैल, 1891 को इन्दौर के पास स्थित महू नामक छावनी क़स्बे में हुआ था। यह क़स्बा इसी नाम की रियासत की राजधानी हुआ करता था जिसको आजादी के बाद मध्य भारत (वर्तमान मध्य प्रदेश प्रान्त) शामिल कर लिया गया था। इन्दौर रियासत के बहुत सारे बाशिन्दों की तरह उनका परिवार भी महाराष्ट्र से यहाँ आया था। गौरतलब है कि इस रियासत का राजवंश भी निचली जाति से ही था। उनका गाँव अम्बावाड़े मराठा रियासत की कोंकण तटीय पट्टी में पड़ता था। लिहाजा आंबेडकर का मूल नाम अंबावाड़ेकर भी इसी आधार पर पड़ा था (वर्ष 1900 में उनके एक ब्राह्मण अध्यापक ने उनकी कुशाग्र बुद्धि और व्यक्तिगत गुणों को देखकर उन्हें अपना नाम दे दिया था और इस तरह वह आंबेडकर कहलाने लगे)।

आंबेडकर सालों तक अस्पृश्यों के साथ होने वाले दैनिक भेदभाव से बचे रहे क्योंकि उनके पिता एक छावनी में काम करते थे जहाँ इस तरह का भेदभाव नहीं था। उनके पिता ब्रिटिश भारतीय सेना में सिपाही थे। खैर, धीरे-धीरे उन्हें भी एक अस्पृश्य व्यक्ति के रूप में जीवन की धूप-छाँव का सामना तो करना ही था। चुनांचे, बचपन में ही उन्हें इस सवाल से जूझना पड़ा कि कोई नाई उनके बाल क्यों नहीं काटना चाहता? सबसे बढ़कर, उन्हें एक ऐसे अपमानजनक अनुभव से गुजरना पड़ा जिसने उनकी जिंदगी की दिशा बदल दी और जिसे वे कभी भी भुला नहीं पाए। यह घटना यों थी : एक दिन वह अपने भाई और बहन के साथ रेल में सवार होकर पिता से मिलने के लिए रवाना हुए। वे वहाँ जा रहे थे जहाँ उनके पिता काम करते थे। जब वे मंजिल पर पहुँचे तो स्टेशन मास्टर ने उनको पास बुलाकर कुछ पूछताछ की। जैसे ही स्टेशन मास्टर को उनकी जाति का पता चला, वह 'पाँच क़दम पीछे हट गया!' ताँगे वाले भी उन्हें उनके पिता के गाँव तक ले जाने को तैयार नहीं होते थे। एक ताँगेवाला तैयार तो हुआ मगर उसने शर्त रखी की ताँगा बच्चों को ख़ुद ही हाँकना होगा। कुछ दूर जाने पर ताँगेवाला नाश्ता करने के लिए एक ढाबे के सामने रुक गया। वह तो भीतर जाकर नाश्ता करने लगा मगर बच्चों को बाहर ही इन्तज़ार करना पड़ा। उन्हें पास में बह रही एक धारा के रेतीले पानी से ही अपनी प्यास बुझानी पड़ी। आंबेडकर के दिलो-जहन में अपने हालात का यह भीषण एहसास शायद इसलिए भी तीखा रहा होगा क्योंकि उनके पास बहुत संवेदनशील और पैना दिमाग़ था।

वर्ष 1907 में इन्हीं बौद्धिक गुणों की बदौलत उन्हें बम्बई स्थित एल्फिन्स्टन हाईस्कूल से मेट्रिकुलेशन का सर्टिफिकेट मिला। कुछ साल पहले उनके पिता यहीं आकर बस गए थे। इसके बाद उन्होंने वजीफ़ा हासिल किया, विख्यात एल्फिन्स्टन कॉलेज में दाखिला लिया और 1912 में यहीं से बी.ए. की डिग्री ली। इसके बाद उन्हें अमेरिका जाकर आगे पढ़ाई के लिए एक और छात्रवृत्ति मिली। उनसे पहले उनकी जैसी पृष्ठभूमि के किसी व्यक्ति को ऐसा अवसर नहीं मिला था। उन्होंने न्यूयॉर्क स्थिति कोलम्बिया यूनिवर्सिटी से एम.ए. की डिग्री हासिल की और फिर 1916 में वे लन्दन के लिए रवाना हो गए जहाँ उन्हें क़ानून की पढ़ाई के लिए ग्रेज इन में दाखिला मिल गया था। बाद में वह लन्दन स्कूल ऑफ़ इकोनॉमिक्स में अपनी पढ़ाई जारी रखते रहे मगर यहाँ वे ज्यादा समय तक नहीं रह पाए। जल्दी ही उन्हें भारत लौटना पड़ा क्योंकि उनकी छात्रवृत्ति ख़त्म हो चुकी थी।

इस तरह, 1917 में वे लन्दन से भारत आ गए। उनकी इन अकादमिक उपलब्धियों के फलस्वरूप अंग्रेजों का ध्यान भी उनकी ओर गया। उन्हें आंबेडकर में अस्पृश्यों का एक भावी प्रतिनिधि दिखाई पड़ रहा था। 1919 में मताधिकार प्रदान करने के लिए योग्यता कसौटी में संशोधन करने के लिए साउथबॅरो कमेटी बनाई गई थी ताकि और ज़्यादा भारतीयों को विभिन्न प्रान्तों की असेम्बली में चुनाव के लिए मतदान का अधिकार मिल सके। इस कमेटी ने जिन लोगों से सलाह माँगी उनमें आंबेडकर भी एक थे। यह एक बहुत महत्त्वपूर्ण क्षण था क्योंकि 1919 में ही ब्रिटिश भारत की प्रान्तीय

असेम्बलियों और सरकारों को पहले से ज्यादा अधिकार व सत्ता देने वाले सुधार शुरू किए गए थे। इसके बाद ही भारतीय मंत्रियों (लेजिस्लेटिव काउंसिल के प्रति उत्तरदायी) को भी सरकार में शामिल किया जाने लगा था। आंबेडकर ने अस्पृश्यों के लिए पृथक निर्वाचक मंडल और आरक्षित सीटों की व्यवस्था की माँग उठाई थी।

साल 1920 में उन्होंने शिवाजी के वंशज, कोल्हापुर के महाराजा शाहू महाराज की आर्थिक सहायता से मूक नायक नामक एक नया जरनल शुरू किया। मगर, जब शाहू महाराज ने आंबेडकर को एक बार फिर इंग्लैंड जाने और पढ़ाई जारी रखने के लिए वज़ीफ़े की पेशकश की तो उन्होंने फ़ौरन यह प्रस्ताव मंजूर कर लिया। क्रमशः, 1921 में उन्होंने मास्टर ऑफ़ साइंस की डिग्री हासिल की और अगले साल 'दि प्रॉब्लम ऑफ़ दि रुपी' (रुपये की समस्या) शीर्षक के तहत अपना शोध पत्र प्रस्तुत किया।

इसके बाद वह भारत लौटे और उन्होंने बम्बई में वकालत की दुनिया में अपने पैर जमाने की कोशिश की। अछूत होने के कारण उनके लिए ग्राहक जुटाना बहुत मुश्किल था। दिल में गहरी कड़वाहट के साथ उन्होंने संकल्प लिया कि वह अपना जीवन जाति व्यवस्था के उन्मूलन के अभियान में समर्पित कर देंगे। तत्पश्चात, जुलाई 1924 में उन्होंने बहिष्कृत हितकारिणी सभा का गठन किया और 1928 तक इसका नेतृत्व भी सँभाला। इससे पिछले साल उन्हें अंग्रेज सरकार ने बॉम्बे प्रेजिडेंसी की लेजिस्लेटिव काउंसिल में मनोनीत किया था। काउंसिल में रहते हुए आंबेडकर ने अस्पृश्यों को कुंओं से पानी निकालने (यही आगे चलकर 1927 में कोंकण तट पर महाड़ में होने वाली उनकी पहली विशाल गोलबन्दी का लक्ष्य बनने वाला था) और मन्दिरों में प्रवेश का क़ानूनी अधिकार दिलाने के लिए हर सम्भव प्रयास किया। मन्दिर प्रवेश के सवाल पर आंबेडकर ने जो आन्दोलन शुरू किया वह 1935 तक रह-रह कर चलता रहा।

तीस का दशक आंबेडकर के लिए दलगत राजनीति में नए प्रयोगों का दौर रहा। उन्होंने अंग्रेजों से माँग की कि अस्पृश्यों को पृथक निर्वाचक मंडल का अधिकार दिया जाए। अगर उनकी यह माँग मान ली जाती तो अस्पृश्य निश्चित रूप से एक मज़बूत राजनीतिक शक्ति में रूपान्तरित हो सकते थे। अंग्रेज सरकार ने भी कम्युनल अवॉर्ड के सिलसिले में हुई चर्चाओं के दौरान उनके तर्कों पर आंशिक सहमति दे दी थी जिसकी घोषणा भी सरकार की ओर से 24 अगस्त, 1932 को की गई थी। मगर, चूँकि गांधीजी को भय था कि अस्पृश्यों के लिए पृथक निर्वाचन मंडल की व्यवस्था हिन्दू एकता को क्षीण कर देगी इसलिए वे तत्काल ही पूना स्थित यरवदा जेल में अनशन पर बैठ गए थे। फलस्वरूप, आंबेडकर को पृथक निर्वाचन मंडल की अपनी माँग छोड़नी पड़ी और 24 सितम्बर, 1932 को पूना पैक्ट पर दस्तख़त भी करने पड़े। इस घटनाक्रम से आंबेडकर को गहरा धक्का लगा था। हालाँकि बाद में सदाशयता का भाव दिखाते हुए गांधी ने इस बात को माना था कि अस्पृश्यों को बड़ी संख्या में आरक्षित सीटें मिलनी चाहिए।

1936 में आंबेडकर ने अपनी पहली राजनीतिक पार्टी-इंडिपेंडेंट लेबर पार्टी (आईएलपी)- का गठन किया। यह फैसला 1937 में होने वाले चुनावों के मद्देनजर लिया गया था। 1937 के चुनाव गवर्नमेंट ऑफ़ इंडिया ऐक्ट, 1935 के प्रावधानों के तहत कराए गए थे। यह क़ानून प्रान्तीय सरकारों और असेम्बलियों को 1919 के सुधारों से कहीं ज्यादा शक्तियाँ व अधिकार देता था। आईएलपी ने केवल बॉम्बे प्रेजिडेंसी और मध्य प्रान्त में ही अपने उम्मीदवार मैदान में उतारे और यहाँ पार्टी को कुछ सफलता भी मिली। पार्टी के 9 अन्य सदस्यों के साथ-साथ आंबेडकर भी निर्वाचित घोषित हुए।

दूसरे विश्व युद्ध ने भारतीय राजनीति में बदलावों की गति और तेज कर दी थी। ब्रिटेन ने कांग्रेस की सलाह और सहमति के बिना भारत को भी विश्व युद्ध में घसीट लिया था। लिहाजा, कांग्रेस के प्रतिनिधियों ने उन आठों प्रान्तीय सरकारों से इस्तीफ़ा दे दिया जिनका नेतृत्व उनके हाथ में था। बाक़ी भारतीयों को युद्ध प्रयासों के पक्ष में करने के लिए अंग्रेजों ने मुस्लिम लीग, हिन्दू महासभा और आईएलपी जैसी छोटी राजनीतिक पार्टियों के नेताओं को अपनी और खींचना शुरू किया। इस क्रम में आंबेडकर 1941 में डिफेंस एडवाइजरी कमेटी के सदस्य बने और 1942 में उन्हें श्रम मंत्री नियुक्त किया गया।

तीस का दशक आंबेडकर के लिए दलगत राजनीति में नए प्रयोगों का दौर रहा। उन्होंने अंग्रेजों से माँग की कि अस्पृश्यों को पृथक निर्वाचक मंडल का अधिकार दिया जाए। अगर उनकी यह माँग मान ली जाती तो अस्पृश्य निश्चित रूप से एक मज़बूत राजनीतिक शक्ति में रूपान्तरित हो सकते थे।

मंत्री के रूप में अपनी गतिविधियों के साथ-साथ वह अपनी पार्टी की रणनीति को भी तराशते रहे और 1942 में उन्होंने शेड्यूल्ड कास्ट्स फेडरेशन (एससीएफ) के नाम से एक नए संगठन का गठन किया। 'शेड्यूल्ड कास्ट्स' (अनुसूचित जतियाँ) उन अस्पृश्य जातियों का समूह था जिनको सरकार द्वारा अनुसूचित जातियों की सूची में शामिल किया गया था। शिक्षा व्यवस्था और सरकारी नौकरियों में इन जातियों को आरक्षण देने के लिए सरकार ने यह सूची तैयार की थी। सभी मजदूरों में अपना राजनीतिक जनाधार फैलाने का प्रयास करने के बाद आंबेडकर अपनी कोशिशों को सिर्फ़ अस्पृश्यों के बीच ही सीमित करते गए। कांग्रेस की विराट राजनीतिक ताक़त के सामने एससीएफ का कोई मेल नहीं बैठता था। लिहाजा मार्च 1946 में एससीएफ को प्रांतीय असेम्बलियों के चुनावों में भारी पराजय का सामना करना पड़ा। और तो और, खुद आंबेडकर भी अपनी सीट नहीं जीत पाए।

बहरहाल, इस नाकामयाबी के बावजूद अस्पृश्यों के सबसे महत्त्वपूर्ण प्रतिनिधि के रूप में उनका राजनीतिक उभार जारी रहा।

3 अगस्त, 1947 को जवाहरलाल नेहरू ने उन्हें अपनी सरकार में विधि मंत्री नियुक्त किया और तीन सप्ताह बाद 29 अगस्त को उन्हें संविधान का प्रारूप तैयार करने के लिए बनाई गई ड्राफ्टिंग कमेटी (मसविदा समिति) का अध्यक्ष बना दिया गया। 1947-50 के बीच यही उनकी सारी सरगर्मियों का केन्द्र रहा।

सविधान में समाज सुधारों के लिए एक अनुकूल रूपरेखा तय की गई थी। खासतौर से अस्पृश्यता को समाप्त घोषित करने और जाति, नस्ल व लिंग के आधार पर होने वाले भेदभावों को निषिद्ध घोषित करके संविधान में समाज सुधार के लिए एक अनुकूल रूपरेखा तय की गई थी। आंबेडकर भारतीय समाज की तमाम विकृतियों को मुकम्मल तौर पर खत्म करने के लिए कृतसंकल्प थे। इसीलिए जनवरी 1950 में उन्होंने विवाह व तलाक, उत्तराधिकार और दत्तकता आदि के बारे में प्रावधान तय करने के लिए तैयार किए गए हिन्दू कोड बिल में संशोधन का अभियान शुरू किया। उनका कहना था कि यह कानून हिन्दू समाज में दीर्घकालिक सुधारों का साधन बनना चाहिए। मगर नेहरू इस बात से चिन्तित थे कि कांग्रेस के रूढ़िवादी नेता रेडिकल सुधारों की वजह से दूर छिटक सकते हैं। लिहाजा, नेहरू ने आंबेडकर के प्रस्तावों पर एक खामोशी बनाए रखी और फलस्वरूप सितम्बर 1952 में आबेडकर ने सरकार से इस्तीफा दे दिया। एक बार फिर वह विपक्ष में बैठे और सोशलिस्टों के साथ अपने पुराने ताल्लुकात को फिर से खंगालना शुरू किया। 1951-52 के चुनावों में इस गठजोड़ को भी भारी झटका लगा।

इसके बाद वह बौद्ध धर्म की तरफ मुड़े। उनको अन्तिम मुख्य रचना, दि बुद्ध ऐण्ड हिज धम्मा उनके इसी बदलाव पर केन्द्रित है। यह किताब मरणोपरान्त 1957 में प्रकाशित हुई। इस किताब के प्रकाशन से एक साल पहले उन्होंने 14 अक्टूबर को दशहरा के महत्वपूर्ण हिन्दू पर्व के दिन नागपुर में एक विशाल जनसमूह के सामने बौद्ध धर्म अंगीकार किया। इस अवसर पर हजारों दूसरे अस्पृश्यों ने भी उनका अनुसरण करते हुए बौद्ध धर्म कुबूल किया। अगले माह 30 नवम्बर को वह दिल्ली लौटे और 6 दिसम्बर, 1956 को उनका देहान्त हो गया।

31 जनवरी, 1920 के मूक नायक के पहले ही अंक में, जब वे सार्वजनिक पटल पर प्रवेश ही कर रहे थे, उन्होंने एक ऐसे मंच की ज़रूरत पर जोर दिया था 'जहाँ हम अपने ऊपर और दूसरे दबे-कुचले लोगों के साथ हो रहे बेतहाशा अन्याय या संभावित अन्याय पर विचार कर सकें और उनके भावी विकास के लिए उचित रणनीतियों पर विवेचनात्मक ढंग से चिन्तन किया जा सके। मगर, इससे पहले कि मैं उनकी रणनीतियों पर चर्चा करूँ, मैं यह समझने की कोशिश करूँगा कि आंबेडकर 'आंबेडकर' कैसे बने। इसके लिए सबसे पहले मैं उनको महाराष्ट्र और उनके पारिवारिक व सामाजिक परिवेश के सन्दर्भ में देखने का प्रयास करूँगा। तत्पश्चात मैं इस बात का विश्लेषण करूँगा कि जाति व्यवस्था को ख़त्म करने के लिए शुरू से ही वह उसके बारे में किस तरह सोचने लगे थे। राजनेता आंबेडकर और कार्यकर्ता आंबेडकर की छवियों के पीछे एक चिन्तक आंबेडकर की छवि प्रायः छिपी रह जाती है और यह एक अफ़सोस की बात है क्योंकि उनकी बहुत सारी रचनाएँ बहुत अव्वल दर्जे की बौद्धिक कृतियाँ हैं। फिर भी, दूसरे चिन्तकों के विपरीत उनका अपना लालन-पालन और हालात ऐसे रहे कि वह समाजशास्त्री के रूप में अपनी प्रतिभा का प्रयोग अपने सामाजिक परिवर्तन के उद्देश्य के लिए कर पाए : उन्होंने जाति की संरचना की चीर-फाड़ इसलिए की ताकि वह ऊँच-नीच पर आधारित इस सामाजिक व्यवस्था को जड़ से ख़त्म कर सकें और इस मिश्रित पद्धति की वजह से ही उन्हें एक विशुद्ध समाज वैज्ञानिक के रूप में मान्यता नहीं मिल पाई।

एक पथप्रदर्शक के रूप में आंबेडकर एक उद्देश्य से दूसरे उद्देश्य की ओर बड़ी एहतियात से क़दम बढ़ाते हुए दिखाई पड़ते हैं। सबसे पहले उन्होंने अस्पृश्यों को सुधारने का प्रयास किया ताकि उन्हें वृहत्तर हिन्दू समाज के भीतर तरक्की के मार्ग पर ले जा सकें (मुख्य रूप से शिक्षा के माध्यम से)। बाद में, तीस के दशक में वे राजनीति में दाखिल हो गए। उन्होंने जिन पार्टियों की स्थापना की वे कभी अस्पृश्यों के संगठन दिखाई पड़ती थीं तो कभी उत्पीड़ितों की गोलबन्दी का आधार दिखाई देती थीं। मगर उन्होंने अपनी राजनीतिक कार्रवाइयों को सिर्फ दलगत राजनीति तक सीमित नहीं रखा। उन्होंने सरकारों के साथ दोस्ती बनाने और तोड़ने में भी कभी गुरेज़ नहीं किया। चाहे अंग्रेज़ हों या कांग्रेस की सरकारें हों, सत्ता में बैठे लोगों पर भीतर से अपने उद्देश्य के हित में दबाव पैदा करने के लिए वह सरकारों में जाते रहे और उनको छोड़ते भी रहे। अपनी इसी पद्धति की बदौलत वह भारतीय संविधान की ड्राफ्टिंग कमेटी के अध्यक्ष के रूप में अस्पृश्यों के हित में आवाज़ उठा पाए और गांधी के कुछ विचारों को हाशिए पर रखने में कामयाब हुए। मगर आंबेडकर इस तरह की राजनीतिक सक्रियता से सन्तुष्ट नहीं थे। अन्ततः वह इसे निर्रथक मानने लगे थे। नियमित अन्तराल पर वह रह-रह कर एक ज्यादा रेडिकल रास्ता अपनाते रहे, एक ऐसा रास्ता जो आख़िकार एक अन्य धर्म को अपनाने तक जा पहुँचा। यह परिणति जाति व्यवस्था के उनके विश्लेषण और इस निष्कर्ष की स्वाभविक उत्पत्ति थी कि जाति व्यवस्था हिन्दू धर्म के मूलाधार का अंग है। वह 1920 के दशक से ही इस निष्कर्ष पर पहुँचने लगे थे मगर अपने जीवन के अन्तिम साल तक धर्मांतरण के इस साहसिक फैसले को लागू करने से बचते रहे।

इस तरह, आंबेडकर दो छोरों के बीच झूलते दिखाई देते हैं। एक तरफ़ तो वह हिन्दू समाज या समूचे भारतीय राष्ट्र में अस्पृश्यों की उन्नति चाहते हैं और दूसरी तरफ़ वे एक पृथक निर्वाचक मंडल या पृथक दलित पार्टी या हिन्दू धर्म को छोड़ कर कोई अन्य धर्म अपनाने जैसी विच्छेद की रणनीतियों पर भी काम करते रहे। उन्होंने समाधानों की तलाश की, नई-नई रणनीतियाँ आजमाईं और ऐसा करते हुए दलितों को मुक्ति के एक कठिन मार्ग पर ले चले।

(स्रोत : लेखक जाफ्रलो किंग्स इंडिया इंस्टीट्यूट, लन्दन में भारतीय राजनीति एवं समाजशास्त्र के प्रोफेसर हैं। राजकमल प्रकाशन से छपी उनकी पुस्तक भीमराव आंबेडकर एक जीवनी से साभार। अनुवादः योगेन्द्र दत्त) ■

अपना-अपना इतिहास

मनोज झा

(संसद के बजट सत्र में राज्यसभा में इतिहास को लेकर चर्चा गंभीर हो गई, जब राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ से जुडे सदस्य राकेश सिन्हा ने एक प्रस्ताव लाया कि प्राचीन भारत के इतिहास में स्वर्णिम काल की खोज केलिए प्रयास होने चाहिए और इसके लिए संस्थान गठित हो। इस विषय पर राष्ट्रीय जनतादल के सांसद मनोज झा ने जो वक्तव्य दिया, उसका सारांश हम यहाँ प्रकाशित कर रहे हैं। - संपादक)

मैं समझता हूं कि हम लोग मैकॉले को काफी तंज करके रेफर करते हैं, लेकिन कभी हम लोगों को यह भी सोचना चाहिए कि दलित-बहुजन चिंतक मैकॉले को अलग ढंग से क्यों देखते हैं? वे क्यों मानते हैं कि मैकॉले ने कुछ द्वार भी खोले थे।

मैं बाबासाहेब भीमराव आंबेडकर की बात कर रहा हूं। बाबासाहेब समझते थे कि भारत का भविष्य पश्चिमी शिक्षा और पश्चिमी संस्थाओं में है। बाबासाहेब पर तो माला पहनायी जाए, उन पर फिल्में बनायी जाएं, लेकिन उनके विचारों को आत्मसात न किया जाए, क्योंकि बाबासाहेब आपके एथनोसेंट्रिक एप्रोच [जाति आधारित श्रेष्ठतावादी दृष्टिकोण] को चैलेंज करते हुए उसको धूल-धूसरित करने की कोशिश करते हैं। इस तरह के कांट्रडिक्शंस (अंतर्विरोधों) में मैं समझता हूं कि बाबासाहेब ने स्वयं न सिर्फ इन कांट्रडिक्शंस (अंतर्विरोधों) का जिक्र किया, बल्कि इन कांट्रडिक्शंस को एक आंदोलन – उन्होंने बिना वजह नहीं कहा था, आन्दोलन करो और शिक्षित बनो? क्योंकि वे जानते थे कि शिक्षा किस तरह की है।

आप जिस प्राचीन भारत का जिक्र कर रहे हैं – हर वह चीज़ जो प्राचीन होती है, वह स्वर्णिम नहीं होती है। हम सब लोगों को बताया गया कि गुप्ता पीरियड वाज द गोल्डेन पीरियड ऑफ इंडियन हिस्ट्री [गुप्त काल भारतीय इतिहास का स्वर्णिम युग था]। जब ग़ौर से पढ़ा तो पता चला कि स्लेवरी [गुलामी] तो वहीं से आई थी, वीमेन के स्टेटस [महिलाओं की स्थिति] में डिटोरिएशन [गिरावट] वहीं हुआ। ... अगर इस सदन और हम सबको कोई व्यवस्था बहाल करनी है तो द गोल्डेन पीरियड शैल बी इन द फ्यूचर, व्हिच वी शैल टेक; इफ नॉट पॉसिबल वी शैल स्नैच – [तो स्वर्णिम काल आगे चल कर आएगा, जिसे हम बनाएंगे और यदि यह संभव नहीं हुआ तो हम छीन लेंगे] मैं चाहता था कि इस नजरिए से अपनी एक बात रखूं।

महोदय, हम अक्सर अतीत के नोस्टॉलजिया में जाते हैं। नोस्टॉलजिया में कहते हैं कि प्राचीन काल में ऐसा था, प्राचीन काल में वैसा था। मैं पेरियार को उद्धृत करना चाहता हूं। उत्तर भारत में अभी भी बहुत कम लोग ऐसे हैं, जिन्होंने उनके नाम के सिवाय उनकी रचनाओं को भी पढ़ा हो।

महोदय, यह एक किताब है– 'सच्ची रामायण'। यह प्रतिबंधित कर दी गई थी। उनकी कई अन्य किताबें भी बैन हुईं। उनकी किताबें बैन होने के बाद जब लोगों ने संघर्ष किया तो पेरियार के बारे में इलाहाबाद उच्च न्यायलय ने क्या कहा, यह हम सबको जानना चाहिए।

राकेश जी, मैं इसे आपके समक्ष रखता हूं, 'हमें यह मानना संभव नहीं लग रहा है कि इसमें लिखी बातें आर्य लोगों के धर्म को अथवा धार्मिक विश्वासों को चोट पहुंचाएंगीं। लेखक का उद्देश्य जान-बूझकर हिंदुओं की भावनाओं को ठेस पहुंचाने की बजाए, अपनी जाति के साथ हुए अन्याय को दिखलाना भी हो सकता है, निश्चय ही ऐसा करना असंवैधानिक नहीं माना जा सकता है।'

यह इलाहाबाद उच्च न्यायालय ने कहा है। पेरियार का क्या मानना था, क्या हमें उसे नहीं देखना चाहिए! बाबासाहेब का क्या मानना था! क्यों ऐसा होता है कि प्राचीन भारत की हमारी संकल्पना, जो हमारे तमिलनाडु के साथी भी कह रहे थे, शिवदासन जी भी कह रहे थे – उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश और राजस्थान, यह जो काऊ बेल्ट है, इसकी संकल्पना को ही हम प्राचीन भारत की संकल्पना मानेंगे, तो कैसे होगा – 'एक भारत, श्रेष्ठ भारत'। 'एक भारत, श्रेष्ठ भारत' के लिए अगर आप कहते हैं कि कश्मीर से लेकर कन्याकुमारी तक भारत एक है तो सांस्कृतिक विविधता और बहुलतावाद के आधार पर बिना एथ्नोसेंट्रिक एप्रोच के हमें आगे बढ़ना होगा।

मैंने अतीत के उलटे पांव की यात्रा की बात कही है। क्रिटिकल पॅडोगॉजी- समालोचनात्मक शिक्षण- एक चीज़ होती है। शिक्षा की कई परिभाषाएं हो सकती हैं, लेकिन बुनियादी परिभाषा क्या है – एजुकेशन शुड बी ऍन इंस्ट्रूमेंट फॉर इमॅनशिपेशन [शिक्षा मुक्ति का, स्वतंत्रता का उपकरण होना चाहिए]। उन लोगों को हर तरह के बंधनों से आज़ाद करें। चाहे वैचारिक बंधन हों, या धार्मिक बंधन हों, या किसी भी प्रकार का बंधन हो।

महोदय, मैं आपके माध्यम से यहां दो चीजें रेफर करना चाहूंगा। दो किताबें हैं। पहली मणि मुग्ध शर्मा ने 'अल्लाहू-अकबर' किताब लिखी। उन्होंने अकबर को कांटेंपररी [तत्कालीन सन्दर्भों] में समझने की कोशिश की और दूसरा हमारे जयराम रमेश जी की किताब 'द लाइट ऑफ एशिया : द पोएम दैट डिफाइंड द बुद्धा'। मैं आग्रह करूंगा कि इन किताबों को पढ़ा जाए। इनसे संदर्भ व्यापक होगा। हम तो यह कहते कि वैश्विक दृष्टिकोण क्या है? विश्वविद्यालय में विश्व शब्द पहले क्यों आता है? ऐसे ही यूनिवर्सिटी का अनुवाद विश्वविद्यालय नहीं हुआ। दर्शन वैश्विक होना चाहिए, साइंटिफिक टेंपरामेंट [वैज्ञानिक समझ] होना चाहिए, अन्यथा प्रो. तुलसीराम जी ने जो आत्मकथा लिखीं, वह नहीं लिखनी पड़तीं, ओमप्रकाश वाल्मीकि को 'जूठन' नहीं लिखना पड़ता और रोहित वेमुला को दुनिया से नहीं जाना पड़ता। यह हमारी हकीकत है। मैं यह नहीं कहता कि आपने ही यह हकीकत पैदा की, लेकिन पैदा हुई हकीकत के खात्मे के लिए हमने साझा रूप से कुछ नहीं किया। हम इस हकीकत से संतुष्ट हैं। अरे, जाति है कि जाती नहीं, स्वीकार कर लिया। यह क्यों नहीं जा रही है? यानी यह प्रीविलेज [विशेषाधिकारों] का बंटवारा है। जो प्रीविलेज्ड

[विशेषाधिकार प्राप्त लोग] हैं, उनको खुशी है कि रिचुअल, सिंबॉलिक [औपचारिक, प्रतीकात्मक] बातें बोलकर बाकी बनी रहे जाति। इसी सदन में बैठे बहुत से लोगों को शिक्षा के लिए सघर्ष करना पड़ा होगा, शायद हममें से बहुतों को नहीं करना पड़ा। राकेश जी को नहीं करना पड़ा होगा, मुझे नहीं करना पड़ा।

अंग्रेजी में एक कहावत है – देयर इज नथिंग इन अ नेम [नाम में कुछ नहीं रखा है]। हम हिंदुस्तानी हैं – देयर इज अ लॉट इन द सरनेम [परन्तु यहाँ सरनेम में बहुत कुछ है]। नाम में कुछ नहीं है, लेकिन सरनेम में सब कुछ है। सरनेम ही तय करता है कि कहां तक पहुंचोगे और कहां रोक दिए जाओगे। मैं यह कहना चाहता था कि उसके लिए वैश्विक दृष्टिकोण है। जैसे आप बाबासाहेब आंबेडकर को माला पहनाएंगे, अप्रैल के महीने में कई आयोजन भी किए जाएंगे, लेकिन यह नहीं सोचेंगे कि जॉन डेवी का बाबासाहेब पर क्या प्रभाव था? जॉन डेवी से बाबा साहेब को अलग कर देंगे, तो कुछ हासिल नहीं होगा। फिर यह वही बात हो गई कि मेरे दादा के पास एक हाथी था, हाथी मर गया, लेकिन मैं इस हाथी के सपने में आज भी कविताएं लिख रहा हूं। हमें इस प्रवृत्ति से बचना होगा। मैं फिर कहना चाहता हूं कि सावित्रीबाई फुले ने मैकॉले के बारे में क्या कहा, मार्डन एजुकेशन के बारे में क्या कहा, इंग्लिश इंस्टीट्यूशंस और इंग्लिश एजुकेशन [पश्चिमी संस्थाओं और पश्चिमी शिक्षा] के बारे में क्या कहा?

पेरियार, सावित्रीबाई फुले, जोतिबा फुले, बाबासाहेब डॉ. भीमराव आंबेडकर – आप एक साझी सोच देखिए। क्यों हमारे दलित-बहुजन चिंतक उस तरह से नहीं सोचते हैं, जैसा आप सोच रहे हैं, जैसा आपका प्रस्ताव सोच रहा है। कहीं तो लोचा है। ऐसा क्यों हो रहा है, उसको देखने की जरूरत है।

सर, आज भी हमारे यहां गुणवत्तापूर्ण शिक्षा की बात नहीं होती है। अकसर हम आंकड़ों में यह देखते हैं कि इतना पैनिट्रेशन [कितने नीचे स्तर तक शिक्षा पहुँची] हुआ, लेकिन यह नहीं देखते हैं कि गुणवत्ता पर कितना काम हुआ, एक्सेस [पहुँच] पर कितनी बात हो रही है। अभी कोरोना के दौरान डिजिटल एजुकेशन ने प्रीविलेज्ड को और प्रीविलेज्ड बनाया और बाकियों से सब कुछ छीन लिया। अभी रिसर्च की बात कर रहे हैं और एमफिल खत्म कर दी गयी है। क्या इसका कोई आधार था? न्यू एजुकेशन पॉलिसी आई। उसके बहुत गाने गाए जा रहे हैं, लेकिन दुख के साथ कहता हूं कि सदन में न्यू एजुकेशन पॉलिसी की चर्चा नहीं होती।

प्राचीन विश्वविद्यालयों के बारे में आपकी चिंता बहुत अच्छी लगी, लेकिन प्राचीन के लिए आंसू बहाने से पहले जरा हम समकालीन विश्वविद्यालयों को भी देख लें। अगर मैं अपने ही बिहार को, उत्तर प्रदेश को और अलग-अलग राज्यों को देखता हूं, तो वाइस चांसलर्स [कुलपति] के नियुक्ति का तरीका – फिर मैं यह कह रहा हूं कि यह मत कहिएगा कि आपकी आलोचना कर रहा हूं – वाइस चांसलर का अप्वाइंटमेंट एक खैरात की तरह बंटता है, तो दिलचस्पी इस बात में नहीं है कि विश्वविद्यालय का विमर्श व्यापक हो, विश्वविद्यालय का अपना वाला कहां एडजस्ट हो जाए, जब तक यह परंपरा खत्म नहीं होगी, मैं समझता हूं कि दिक्कत रहेगी।

राकेश जी, एक फ्रेज [वाक्यांश] मुझे बहुत अच्छी लगी, मैं बधाई देता हूं। राकेश जी, मुस्कराइए, आप इतने गंभीर क्यों बैठे हैं? विचारों का स्वराज, यह सुनने में कितना अच्छा लगता है – सचमुच बहुत अच्छा लगता है। आजकल जितने भी ये स्लोगन्स आ रहे हैं। वे सुनने में बहुत अच्छे लगते हैं, उनकी ध्वनि बहुत अच्छी लगती है, लेकिन ध्वनि को समझने के लिए उसके अंतर्निहित तत्व को समझें। यह जो विचारों का स्वराज है, इसमें कौन-कौन से विचार होंगे, इसमें इंक्लूलन-एक्सक्लूजन क्राइटेरिया [बहिष्करण और समावेशीकरण के मानदंड] क्या होगा, कौन से विचार आपको प्रीतिकर लगेंगे और कौन से अप्रीतिकर लगेंगे, कौन से विचारों को आप कहेंगे कि वे देशद्रोही हैं या देश के खिलाफ विचार हैं, कौन सा विचार ऐसा है, जो देशभक्त विचार है, क्योंकि हम तो यहां देख रहे हैं कि एक कपड़ा भी कंट्रोवर्सी बन जाता है, जहां आपस में बाड़ें खिंच जाती हैं, जहां तस्वीरें बदल जाती हैं। आपने गांधी जी को कोट किया। गांधी जी ने कई दफा प्रार्थना-प्रवचनों में कहा कि मैं अपने घर के दरवाजे-खिड़कियों को बंद नहीं करना चाहता हूं, तो हम क्यों बंद करना चाहते हैं? हमें नहीं बंद करने चाहिए। वेस्टर्न इंस्टीट्यूशंस और वेस्टर्न एजुकेशन ने बहुत सारी चीज़ें दी हैं। मैं यह भी मानता हूं कि डेमोक्रेसी का जो स्वरूप हमारा पहले था और जो स्वरूप आज है, क्या उसमें फर्क नहीं है? उसमें फर्क है। इसलिए मैं कह रहा हूं कि अपने ट्रेडिशन [परम्परा] पर गर्व जरूर होना चाहिए, लेकिन नज़रिया क्रिटिकल [समालोचनात्मक] होना चाहिए। गांधी जी ने कंपोजिट नेशन [समग्र राष्ट्र] की बात भी कही थी। एंड आई कोट, "द रिजोल्यूशन इग्नोर्स वेस्टर्न एंड एशियन इमेजनिंग्सइमेजनिंग्स ऑफ नेशनल हिस्ट्रीज व्हीच हैव गॉन बियांड द बाउंड्रीज ऑफ द नेशन" [मैं उद्धृत करता हूं, "यह प्रस्ताव राष्ट्रीय इतिहास की वैश्विक और एशियाई समझ को नज़रअंदाज़ करता है, वह समझ जो राष्ट्र की सीमाओं के पार की है]। हमने वेस्ट (पश्चिम) कितना दिया है, इसकी पड़ताल हो। हमने वेस्ट को बहुत दिया है, इसलिए एहसास-ए-कमतरी में नहीं सोचना है। मेरा मानना है कि ऐसी व्यवस्थाएं हों, जैसे आपने रिसर्च इंस्टीट्यूट की बात की है, वह बहुत बढ़िया है, लेकिन वहां भी यह तय होना चाहिए कि एक्सक्लूजन-इन्क्लूजन के क्राइटेरिया [बहिष्करण और समावेशीकरण के मानदंड] क्या हैं?

अगर हम वह नहीं करेंगे, तो भारतीयता के नाम पर कहीं ऐसा न हो कि एक बहुत संकीर्ण दायरे की सोच में उल्टे पांव की यात्रा करते रहें। उल्टे पांव की यात्रा के साथ सबसे बड़ी दिक्कत है कि आपको पता नहीं होता है कि आप कब खाई में गिर जाते हैं। व्यवस्थाएं ऐसी हों कि फिर से एजुकेशन कुछ प्रीविलेज्ड [शिक्षा कुछ विशेषाधिकार प्राप्त] वर्गों के हाथों की मुट्ठी की चीज़ न हो जाए, क्योंकि एजुकेशन (शिक्षा) ने इमानशिपेशन [मुक्ति] के लिए काफी कुछ किया है, उसका डेमोक्रेटाइजेशन [लोकतांत्रिकरण] हुआ है।

अगर इस तरह की पद्धतियों से हम आगे चलेंगे, तो वह डेमोक्रेटाइजेशन का प्रोसेस [लोकतांत्रिकरण की प्रक्रिया] रूक जाएगा। राकेश जी, आखिर में आपके लिए– *"अब भीख मांगने के तरीके बदल गए, लाजिम नहीं कि हाथ में कासा दिखाई दे।"*

(25 मार्च 2022, राज्यसभा में सांसद मनोज झा)

गुलामगिरी

जोतीराव फुले

(भारतीय नवजागरण के अग्रदूत महात्मा जोतिबा फुले (1827-1890) का महत्व उनकी मृत्यु के सौ वर्ष बाद स्वीकार किया गया। दलित-पिछड़े तबके के लोगों में जब वास्तविक शिक्षा का संचार हुआ तब जाकर लोगों ने अपने वास्तविक नायक को पहचाना। डॉ आंबेडकर ने बुद्ध और कबीर के साथ फुले को अपना गुरु स्वीकार किया था। हिन्दी क्षेत्र में फुले-आंबेडकरवाद का प्रचार अब जाकर होने लगा है। 'गुलामगिरी' फुले की प्रसिद्ध पुस्तक है और प्रस्तुत लेख उसकी भूमिका है। 11 अप्रैल को फुले का जन्म दिवस है। - संपादक)

सैकड़ों साल से आज तक शूद्रादि-अतिशूद्र (अछूत) समाज, जब से इस देश में ब्राह्मणों की सत्ता कायम हुई तब से लगातार जुल्म और शोषण का शिकार है। ये लोग हर तरह की यातनाओं में और कठिनाइयों में अपने दिन गुजार रहे हैं। इसलिए इन लोगों को इन बातों की ओर ध्यान देना चाहिए और गम्भीरता से सोचना चाहिए। अब इसके आगे ये लोग अपने आपको ब्राह्मण पण्डा-पुरोहितों की जुल्म ज्यादतियों से कैसे मुक्त कर सकते हैं। यही आज हमारे लिए सबसे महत्वपूर्ण सवाल है। यही इस ग्रन्थ का उद्देश्य है। यह कहा जाता है कि, इस देश में ब्राह्मण-पुराहितों की सत्ता कायम होने को लगभग तीन हजार साल से भी ज्यादा समय बीत गया होगा। वे लोग परदेश से यहां आये। उन्होंने इस देश के मूल निवासियों और इन सभी को अपना गुलाम (दास, दस्यु) बनाया और उन्होंने इनके साथ बड़ी अमानवीयता का रवैया अपनाया था। आगे सैकड़ों साल बीत जाने के बाद इन लोगों को बीते काल की घटनाओं की विस्मृतियां हुईं देखकर कि हमने परदेश से आकर यहां के मूल निवासियों को घर-बार, जमीन-जायदाद से खदेड़कर इन्हें अपने गुलाम बनाकर रखा, इस बात के प्रमाणों को ब्राह्मण पण्डा-पुरोहितों ने तहस-नहस कर दिया, दफनाकर नष्ट कर दिया।

उन ब्राह्मणों ने अपना प्रभाव, अपना वर्चस्व इन लोगों के दिलों-दिमाग पर रहे जिससे केवल अपना स्वार्थ फलता-फूलता रहे, इसलिए उन्होंने कई तरह के हथकण्डे अपनाये और वे सभी इसमें कामयाब भी रहे-चूंकि उस समय ये लोग सत्ता की दृष्टि से पहले ही पराधीन हुए ही थे और बाद में ब्राह्मण पण्डा-पुरोहितों ने उन्हें ज्ञानहीन-बुद्धिहीन बना दिया था जिसका परिणाम यह हुआ कि ब्राह्मण पण्डा-पुरोहितों के दांव-पेंच, उनकी जालसाजी इनमें से किसी के भी ध्यान में नहीं आ सकी। ब्राह्मण पण्डा-पुरोहितों ने इन पर अपना वर्चस्व कायम कर इन्हें हमेशा-हमेशा के लिए अपने गुलाम बनाकर रखने के लिए केवल अपने निजी हितों को ही मद्देनजर रख कर एक से अधिक बनावटी ग्रंथों की रचना करके कामयाबी हासिल की। उन नकली ग्रन्थों में उन्होंने यह दिखाने की पूरी कोशिश की कि हमें जो विशेष अधिकार प्राप्त हैं, वे सब हमें ईश्वर द्वारा प्राप्त हैं। इस तरह झूठा प्रचार इस समय के अनपढ़ लोगों में किया गया और उस समय के शूद्रादि-अतिशूद्रों में मानसिक गुलामी के बीज बोये गये। उन ग्रन्थों में यह भी लिखा गया कि शूद्रों को ब्रह्मा ने पैदा करने का उद्देश्य बस इतना ही था कि इन्होंने-हमेशा हमेशा के लिए ब्राह्मण पुरोहितों की सेवा करने में ही लगे रहना चाहिए और ब्राह्मण पण्डा-पुरोहितों की मर्जी के खिलाफ कुछ भी नहीं करना चाहिए। मतलब, ये ईश्वर को प्राप्त होंगे और इनका जीवन सार्थक होगा।

लेकिन अब इन ग्रन्थों के बारे में किसी ने कुछ मामूली सोचा भी होता कि यह बात कहां तक सही है? क्या वे सचमुच ईश्वर द्वारा प्राप्त हैं? तो उन्हें इसकी सच्चाई तुरन्त समझ में आ जाएगी। लेकिन इस प्रकार के ग्रंथों से सर्वशक्तिमान सृष्टि का निर्माता जो परमेश्वर है, उसकी सामंतवादी दृष्टि को बड़ा गौणत्व प्राप्त हो गया है। इस तरह के हमारे जो ब्राह्मण पण्डा-पुरोहित वर्ग के भाई हैं, जिन्हें भाई कहने में भी शर्म आती है, क्योंकि उन्होंने किसी समय शूद्रादि-अतिशूद्रों को पूरी तरह से तबाह कर दिया था और वही लोग अभी धर्म के नाम पर, धर्म की मदद से इनको चूस रहे हैं। एक भाई द्वारा दूसरे भाई पर जुल्म करना यह भाई का धर्म नहीं है। फिर भी हमें हम सभी के उत्पन्नकर्ता के रिश्ते से उन्हें भाई कहना पड़ रहा है, तो वे भी खुले रूप से यह कहना छोड़ेंगे नहीं, फिर भी उन्होंने केवल अपने स्वार्थ को ही ध्यान न रखते हुए सिर्फ न्यायबुद्धि से ही सोचना चाहिए। यदि ऐसा ही है तो उन ग्रंथों को देखकर पढ़कर हमारे बुद्धिमान अंग्रेज, फ्रेंच, जर्मन, अमरीकी और अन्य बुद्धिमान लोग अपना यह मत दिये बिना नहीं रहेंगे कि उन ग्रंथों को ब्राह्मणों ने केवल मतलब के लिए लिख रखा है। उन ग्रंथों में हर तरह से ब्राह्मण पण्डा-पुरोहितों का महत्त्व बताया गया है। ब्राह्मण पण्डा-पुरोहितों का शूद्रादि-अतिशूद्रों के दिलो-दिमाग पर हमेशा-हमेशा के लिए वर्चस्व बना रहे, इसलिए उन्हें ईश्वर से भी श्रेष्ठ समझा गया है, ऊपर जिनका नाम निर्देश किया गया है, उनमें अंग्रेज लोगों ने इतिहासादि ग्रंथों में कई जगह यह लिख रखा है कि ब्राह्मण पण्डा-पुरोहितों ने अपने निजी स्वार्थ के लिए अन्य लोगों को मतलब शूद्रादि-अतिशूद्रों को अपना गुलाम बना लिया है। उन ग्रन्थों द्वारा ब्राह्मण पण्डा-पुरोहितों ने ईश्वर के वैभव को कितनी नीच स्थिति में ला रखा है, यह सही में बड़ा सोचनीय सवाल है। जिस ईश्वर ने शूद्रादि-अतिशूद्रों को और अन्य लोगों को अपने द्वारा निर्मित इस सृष्टि की सभी वस्तुओं को समान रूप

जोतीराव गोविंदराव फुले

(1827-1890)

भारतीय नवजागरण के अग्रदूत। समाज-सुधारक, समाज-प्रबोधक, विचारक, समाजसेवी, लेखक, दार्शनिक तथा क्रान्तिकारी कार्यकर्ता के रूप में चर्चित।

जन्म : 11 अप्रैल 1827 को खानवाड़ी पुणे, महाराष्ट्र में।

जीवनसाथी : सावित्रीबाई फुले

संगठन निर्माण : सितम्बर 1973 में महाराष्ट्र में सत्य शोधक समाज नामक संस्था का गठन।

भारतीय समाज में प्रचलित जाति पर आधारित विभाजन और भेदभाव के विरुद्ध आजीवन कार्य किया।

महिलाओं,दलितों एवं पिछड़ों के उत्थान के लिए आजीवन क्रियाशील रहे। समाज के सभी वर्गो को शिक्षा प्रदान करने के प्रबल समथर्क रहे।

इनका मूल उद्देश्य स्त्रियों और शूद्रों को शिक्षा का अधिकार प्रदान करना, बाल विवाह का विरोध और विधवा विवाह का समर्थन करना रहा है। फुले समाजिक कुप्रथाओं और अंधश्रद्धा की जाल से भारतीय समाज को मुक्त करना चाहते थे। अपना सम्पूर्ण जीवन उन्होंने स्त्रियों-शूद्रों को शिक्षा प्रदान कराने में, वंचित तबके को उनके अधिकारों के प्रति जागरूक करने में व्यतीत किया।19वीं सदी में स्त्रियों को शिक्षा नहीं दी जाती थी। फुले महिलाओं को स्त्री-पुरुष भेदभाव से बचाना चाहते थे। उन्होंने कन्याओं के लिए भारत देश की पहली पाठशाला पुणे में बनाई। स्त्रियों की तत्कालीन दयनीय स्थिति से फुले बहुत व्याकुल और दुःखी होते थे इसीलिए उन्होंने दृढ़ निश्चय किया कि वे समाज में क्रांतिकारी बदलाव लाकर ही रहेंगे। उन्होंने अपनी धर्मपत्नी सावित्रीबाई फुले को स्वयं शिक्षा प्रदान की। सावित्रीबाई फुले भारत की प्रथम महिला अध्यापिका थीं।

प्रकाशित कृतियां : *गुलामगिरी, किसान का कोड़ा, तृतीय रत्न* (नाटक) *अंतिम सार्वजनिक धर्म* आदि।

मृत्यु : 28 नवम्बर, 1890

से उपभोग लेने की पूरी आजादी दी है, उस ईश्वर के नाम पर ब्राह्मण पण्डा-पुरोहितों ने एकदम झूठ-मूठ ग्रन्थों की रचना करके उन ग्रन्थों में सभी के मानव हक को नकारते हुए स्वयं मालिक हो गये।

इस बात पर हमारे कुछ ब्राह्मण भाई इस तरह का संदेह उठा सकते हैं कि यदि ये तमाम ग्रन्थ झूठ-मूठ के हैं, तो उन ग्रन्थों पर शूद्रादि-अतिशूद्रों के पूर्वजों ने क्यों आस्था रखी थी? और आज भी इनमें बहुत सारे लोग क्यों आस्था रखे हुए हैं? इसका जवाब यह है कि आज के इस प्रगत काल में कोई किसी पर जुल्म नहीं कर सकता, मतलब, अपनी बात को लाद नहीं सकता। आज सभी को अपने मन की बात, अपने अनुभव की बात स्पष्ट रूप से लिखने की या बोलने की इजाज़त है। किसी बुजुर्ग आदमी की ओर किसी धूर्त आदमी ने किसी बड़े-व्यक्ति के नाम से झूठा पत्र भी लिखकर लाया, फिर भी कुछ समय के लिए ही क्यों न हो, उस पर भरोसा करना ही पड़ता है। बाद में समय के अनुसार वह भी झूठा साबित हो ही जाता है। यदि यही है, तो शूद्रादि-अतिशूद्र किसी समय ब्राह्मण पुरोहितों के जुल्म और ज्यादतियों के शिकार होने की वजह से और इन्हें उन्होंने पूरी तरह से अनपढ़-गंवार बनाकर रखने की वजह से उनका पतन हुआ। ब्राह्मणों ने अपने (जाति) स्वार्थ के लिए समर्थ (रामदास) के नाम पर झूठे-पाखण्डी ग्रन्थों की रचना करके शूद्रादि-अतिशूद्रों को गुमराह किया और आज भी इनमें से कई लोगों को ब्राह्मण-पुरोहित लोग गुमराह कर रहे हैं, यह स्पष्ट रूप से उक्त कथन की पुष्टि करता है।

ब्राह्मणपण्डा-पुरोहित लोग अपना पेट पालने के लिए अपने पाखण्डी ग्रन्थों द्वारा जगह-जगह बार-बार अज्ञानी शूद्रों को उपदेश देते रहे हैं जिसकी वजह से इनके दिलो-दिमाग में ब्राह्मणें के प्रति पूज्यबुद्धि उत्पन्न होती रही। इन लोगों को उन्होंने (ब्राह्मणों ने) इनके मन में ईश्वर के प्रति जो भावना है, वही भावना अपने को (ब्राह्मणों को) समर्पित करने के लिए मजबूर किया। यह कोई साधारण या मामूली अन्याय नहीं है। इसके लिए उन्हें ईश्वर के पास जवाब देना होगा। ब्राह्मणों के उपदेशों का प्रभाव अधिकांश अज्ञानी शूद्र लोगों के दिलो-दिमाग पर इस तरह से पकड़ जमाये हुए है कि ये अमरीका के (काले) गुलामों की तरह जिन दुष्ट लोगों ने हमें गुलाम बना कर रखा है, उनसे लड़कर मुक्त (आजाद) होने की बजाय जो हमें आजादी दे रहे हैं उन लोगों के विरुद्ध बेफिजूल कमर कसकर लड़ने के लिए तैयार हुए हैं। यह भी एक बड़े आश्चर्य की बात है कि हम लोगों पर जो भी कोई उपकार करते होंगे, उनको कहना कि

हमपर उपकार मत करो, फिलहाल हम जिस स्थिति में हैं वही स्थिति ठीक है। यह कह कर हम शान्त नहीं होते बल्कि उनसे झगड़ने के लिए भी तैयार रहते हैं। यह गलत है। वास्तव में हमको गुलामी से मुक्त रहने वाले जो लोग हैं, उनका हमको आजाद कराने से कुछ हित होता है, ऐसा भी नहीं है बल्कि उनको अपने ही लोगों में से सैकड़ों लोगों को बलि चढ़ाना पड़ता हैं। उन्हें बड़ी-बड़ी जोखिमें उठाकर अपनी जान पर खतरा झेलना पड़ता है।

अब उनका इस तरह से दूसरों के हितों का रक्षण करने के लिए अगुवाई करने का उद्देश्य क्या होना चाहिए। यदि इस सम्बन्ध में हम ने गहराई से सोचा, तो हमारी समझ में आएगा कि हर मनुष्य को आजाद होना चाहिए, यही उसकी बुनियादी जरूरत है। जब व्यक्ति आजाद होता है, तब उसे अपने मन के भावों और विचारों को स्पष्ट रूप से दूसरों के सामने प्रकट करने का मौका मिलता है, लेकिन जब उसे आजादी नहीं होती, तब वही महत्त्वपूर्ण विचार, जनहित का होने के बावजूद दूसरों के सामने प्रकट नहीं कर सकता, और समय गुजर जाने के बाद वे सभी विचार लुप्त हो जाते हैं। उसी प्रकार मनुष्य आजाद होने से वह अपने सभी मानवीय अधिकार प्राप्त कर लेता है और असीम आनन्द का अनुभव करता है। सभी मनुष्यों को मनुष्य होने के जो सामान्य अधिकार इस सृष्टि के नियंत्रक और सर्वसाक्षी परमेश्वर द्वारा दिये गये हैं उन तमाम मानव अधिकारों को ब्राह्मण पण्डा-पुरोहितवर्ग ने दबोचकर रखा है। अब ऐसे लोगों से अपने मानव अधिकार छीनकर लेने में कोई कसर बाकी नहीं रखनी चाहिए। उनके हक उन्हें मिल जाने से उन अंग्रेजों को खुशी होती है। सभी को आजादी देकर उन्हें जुल्मी लोगों के जुल्म से मुक्त कर के सुखी बनाना यही उनका इस तरह से खतरा मोल लेने का उद्देश्य है। वाह! यह कितना बड़ा जनहित का कार्य है।

यही उनका इतना अच्छा उद्देश्य होने की वजह से ईश्वर उन्हें, वे जहां गये, वहां से ज्यादा कामयाबी देता रहा है, और अब इससे आगे भी उन्हें इस तरह के अच्छे कामों में उनके प्रयास सफल होते रहें, उन्हें कामयाबी ही मिलती रहे, इसलिए हम भगवान से प्रार्थना करते हैं।

दक्षिण अमरीका और अफ्रिका जैसे पृथ्वी के इन दो बड़े हिस्सों में सैकड़ों साल से अन्य देशों से लोगों को पकड़-पकड़कर यहां उन्हें गुलाम बनाया जाता था। यह दासों को खरीदने बेचने की प्रथा यूरोप के और तमाम प्रगत कहलाने वाले राष्ट्रों के लिए बड़ी लज्जा की बात थी। उस कलंक को दूर करने के लिए अंग्रेज, अमरीकी आदि उदार लोगों ने बड़ी-बड़ी लड़ाइयां लड़कर अपने नुकसान की बात तो दरकिनार, उन्होंने अपने जान की भी परवाह नहीं की और गुलामों की मुक्ति के लिए लड़ते रहे। यह गुलामी की प्रथा कई सालों से चली आ रही थी। इस अमानवीय गुलामी प्रथा को समूल नष्ट कर देने के लिए और असंख्य गुलामों को उनके परमप्रिय माता-पिता से भाई-बहानों से, बीवी-बच्चों से, दोस्त-मित्रों से जुदा कर देने की वजह से जो यातनाएं सहनी पड़ीं उससे उन्हें मुक्त करने के लिए उन्होंने संघर्ष किया। उन्होंने जो गुलाम एक-दूसरे से जुदा कर दिये गये थे, उन्हें एक-दूसरे के साथ मिला दिया। वाह! अमरीकी आदि सदाचारी लोगों ने कितना अच्छा काम किया है। यदि आज उन्हें उन गरीब अनाथ गुलामों की बदतर स्थित देखकर दया न आई होती तो वे गरीब बेचारे अपने प्रियजनों को मिलने की इच्छा मन के मन में ही रखकर मर गये होते।

दूसरी बात, उन गुलामों को पकड़कर लाने वाले दुष्ट लोग उन्हें क्या अच्छी तरह रखते भी थे या नहीं? नहीं, उन गुलामों पर वे लोग जिस प्रकार से जुल्म करते थे, उन जुल्मों की कहानी सुनते ही पत्थरदिल आदमी की आंखें भी रोने लगेंगी। वे लोग उन्हें कभी-कभी लहलहाती धूप में हल को जोतकर उनसे अपनी जमीन जोत-बो लेते थे और यदि उन्होंने कुछ थोड़ी-सी आनाकानी भी की, तो उनके बदन पर बैलों की तरह छाटे के घाव उतार देते थे। इतना होने पर भी क्या वे उनके खान-पान की अच्छी व्यवस्था करते होंगे? इस बारे में तो कहना ही क्या! उन्हें केवल एक समय का खाना मिलता था, दूसरे समय कुछ भी नहीं। उन्हें जो भी खाना मिलता था, वह भी बहुत ही थोड़ा-सा-इसकी वजह से उन्हें हमेशा आधे भूखे पेट रहना पड़ता था, लेकिन उनसे छाती चूर-चूर होकर मुंह से खून फेंकने तक दिन भर काम करवाया जाता था और रात को उन्हें जानवरों के कोठे में या इस तरह की गन्दी जगहों में सोने के लिए छोड़ दिया जाता था, जहां थककर आने के बाद वे गरीब

दक्षिण अमरीका और अफ्रिका जैसे पृथ्वी के इन दो बड़े हिस्सों में सैकड़ों साल से अन्य देशों से लोगों को पकड़-पकड़कर यहां उन्हें गुलाम बनाया जाता था। यह दासों को खरीदने बेचने की प्रथा यूरोप के और तमाम प्रगत कहलाने वाले राष्ट्रों के लिए बड़ी लज्जा की बात थी।

बेचारे उस पथरीली जमीन पर मुर्दों की तरह सो जाते थे। लेकिन आंखों में पर्याप्त नींद कहां से होगी? बेचारों को आखिर नींद आएगी भी कहां से? इसमें पहली बात तो यह थी कि पता नहीं, मालिक को किस समय उनकी गरज पड़ जाए और उसका बुलावा आ जाए, इस बात का उनको जबर्दस्त डर लगा रहता था। दूसरी बात यह थी कि पेट में पर्याप्त मात्रा में भोजन नहीं होने की वजह से जी घबराता था और जान लड़खड़ाने लगती थी। तीसरी बात यह थी कि दिन भर बदन पर छांटे के वार बरसते रहने से सारा बदल लहूलुहान हो जाता था और उसकी यातनाएं इतनी जबर्दस्त होती थी कि पानी में मछली की तरह रात भर तड़पते हुए इस करवट से उस करवट पर होना पड़ता था। चौथी बात यह थी कि अपने वाले लोग अपने पास न होने की वजह से उस बात का दर्द तो और भी भयंकर था। इस तरह की बातें मन में आने से यातनाओं का ढेर खड़े हो जाते थे और आंखें रोने लगती थीं। वे बेचारे भगवान से दुआ मांगते थे कि हे भगवान! अब तो भी तुझको हमारी कुछ दया आने दे। तू हम पर रहम कर। अब हम इन यातनाओं को

बर्दाश्त करने के भी काबिल नहीं रहे हैं। अब हमारी जान भी निकल जाए, तो अच्छा ही होगा। इस तरह की यातनाएं सहते-सहते, इस तरह से सोचते-सोचते ही सारी रात गुजर जाती थी। उन लोगों को जिस-जिस प्रकार की पीड़ाओं को, यातनाओं को सहना पड़ा, उनको यदि एक-एक करके कहा जाए तो भाषा और साहित्य के शोक रस के शब्द भी फीके पड़ जाएंगे, इसमें कोई सन्देह नहीं। तात्पर्य, अमरीकी लोगों ने आज सैकड़ों साल से चली आ रही इस गुलामी की अमानवीय परम्परा को समाप्त करके गरीब अनाथ लोगों को उन चंद लोगों के जुल्म से मुक्त करके उन्हें पूरी तरह से सुख की जिन्दगी बख्शी है। इन बातों की शूद्रादि-अतिशूद्रों को अन्य लोगों की तुलना में बहुत ही ज्यादा खुशी होगी क्योंकि गुलामी की अवस्था में गुलाम लोगों को, गुलाम जातियों को कितनी यातनाएं बर्दास्त करनी पड़ती हैं, इसका स्वयं अनुभव किय बिना अंदाजा करना नामुमकिन है। जो सहता है वही जानता है।

अब उन गुलामों में और इन गुलामों में फर्क इतना ही होगा कि पहले प्रकार के गुलामों को ब्राह्मण-पुरोहितों ने अपने बर्बर हमलों से पराजित कर के गुलाम बनाया था और दूसर प्रकार के गुलामों को दुष्ट लोगों ने एकाएक जुल्म करके गुलाम बनाया था। शेष बातों में इनकी और उनकी स्थिति समान है। इनकी स्थिति में और उन गुलामों की स्थिति में बहुत फर्क नहीं है। उन्होंने जिस-जिस प्रकार की मुसीबतों को बर्दाश्त किया है, वे सभी मुसीबतें शूद्रादि-अतिशूद्र होने से ब्राह्मणपण्डा-पुरोहितों से ही है। यदि यह कहा जाए कि उन लोगों से भी ज्यादा की ज्यादतियां इन शूद्रादि-अतिशूद्रों को बर्दाश्त करनी पड़ी , तो इसमें किसी तरह का संदेह नहीं होना चाहिए। उन लोगों को जो जुल्म सहना पड़ा, उसकी एक-एक दास्तान सुनते ही किसी भी पत्थरदिल आदमी को ही नहीं बल्कि साक्षात पत्थर भी पिघलकर उसमें से आंसुओं की बाढ़ निकल पड़ेगी। और उस बाढ़ से धरती पर इतना बहाव होगा कि जिनके पूर्वजों ने शूद्रादि-अतिशूद्रों को गुलाम बनाया, उनके वंशज आज के जो ब्राह्मण-पुरोहित भाई हैं, उनमें से जो अपने पूर्वजों की तरह पत्थरदिल नहीं हैं बल्कि जो अपने अन्दर के मनुष्यत्व को जागृत रखकर सोचते हैं, उन लोगों को यह जरूर महसूस होगा कि यह एक जलप्रलय ही है। हमारी दयालु अंग्रेज सरकार को शूद्रादि-अतिशूद्रों ने ब्राह्मणपण्डा-पुरोहितों से किस-किस प्रकार का जुल्म सहा है और आज भी सह रहे हैं, इसके बारे में कुछ भी मालूमात नहीं है। वे लोग यदि इस सम्बन्ध में पूछताछ करके कुछ जानकारी हासिल करने की कोशिश करेंगे, तो उन्हें यह समझ में आ जाएगा कि, हमने हिन्दुस्तान का जो-जो भी इतिहास लिखा है, उसमें एक बहुत बड़े, बहुत भयंकर और बहुत ही महत्वपूर्ण हिस्से को नज़रअंदाज किया है। उन लोगों को एक बार भी शूद्रादि-अतिशूद्रों के दुख-दर्दों की जानकारी मिल जाए, तो उन लोगों को सच्चाई समझ में आ जाएगी और बड़ी पीड़ा होगी। वे लोग अपने (धर्म) ग्रंथों में, जहां भयंकर बुरी अवस्था में पहुंचाये गये और चंद लोगों द्वारा सताए हुए, जिनकी पीड़ाओं की सीमा ही नहीं है, ऐसे लोगों की दुरावस्था को उपमा देने हो, तो शूद्रादि-अतिशूद्रों की स्थिति की ही उपमा उचित होगी, ऐसा मुझे लगता है। उससे कवि को बहुत विषाद होगा। कुछ अच्छा भी लग जाएगा कि आज तक कविताओं में उसको शाकरस की पूरी तस्वीर श्रोताओं के मन में स्थापित करने के लिए कल्पना की ऊंची उड़ानें भरनी पड़ती थीं, लेकिन जब उन्हें इस तरह की काल्पनिक दिमागी कसरत करने की जरूरत नहीं पड़ेगी क्योंकि अब उन्हें स्वयंभोगियों का जिन्दा इतिहास मिल गया है। यदि यही है, तो आज के शूद्रादि-अतिशूद्रों के दिल और दिमाग अपने पूर्वजों की दास्तानें सुनकर पीड़ित होते होंगे, इसमें कुछ भी आश्चर्य नहीं होना चाहिए क्योंकि हम जिनके वंश में पैदा हुए हैं, जिनसे हमारा खून का रिश्ता है, उनकी पीड़ा से हमें पीड़ित होना स्वाभाविक है। किसी समय ब्राह्मणों की राजसत्ता में हमारे पूर्वजों पर जो भी कुछ ज्यादतियां हुइंर् उनकी याद आते ही हमारा मन घबराकर थरथराने लगता है। मन में इस तरह के विचार आने शुरू हो जाते हैं कि यदि जिन घटनाओं की याद भी हमें इतनी पीड़ादायी है, तो जिन्होंने उन अत्याचारों को सहा है, उनके मन की उस समय की स्थिति किस प्रकार की रही होगी, यह तो वे ही जान सकते हैं। इसकी अच्छी मिसाल हमारे ब्राह्मण भाइयों के (धर्म) शास्त्रों में ही मिलती है। वह यह कि इस देश के मूल निवासी क्षत्रिय लोगों के साथ ब्राह्मण-पुरोहितवर्ग के मुखिया परशुराम जैसे व्यक्ति ने कितनी क्रूरता बरती, यही इस ग्रंथ में बताने का प्रयास किया गया है। फिर भी, उसकी क्रूरता के बारे में इतना समझ में आया है कि उस परशुराम के कई क्षत्रियों को मौत के घाट उतार दिया था। और उस (ब्राह्मण) परशुराम ने क्षत्रियों की अनाथ हुई नारियों से उनके छोटे-छोटे चार-चार, पांच-पांच माह के निर्दोष मासूम बच्चों को उनसे जबर्दस्ती छीनकर अपने मन में किसी प्रकार की हिचकिचाहट न रखते हुए बड़ा क्रूरता से उनको मौत के हवाले कर दिया था। यह उस ब्राह्मण परशुराम का कितना जघन्य अपराध था। वह इतना ही करके चुप नहीं रहा, उसने अपने पति की मौत से व्यथित कई नारियों को, जो अपने पेट के गर्भ की रक्षा करने के लिए बड़े दुखित मन से जंगलों-पहाड़ों में भागे जा रही थीं, उनका कातिल शिकारी की तरह पीछा करके, उन्हें पकड़ कर लाया और प्रसूति के पश्चात जब उसे यह पता चला कि पुत्र की प्राप्ति हुई है, तो वह चण्ड होकर आता और प्रसूतिशुदा नारियों को जान से कत्ल कर देता था। इस तरह की कथा ब्राह्मण गंरथों में मिलती है और जब ब्राह्मण लोग उनके विरोधी दल के थे, तब उनसे उस सयम की सही स्थिति समझ में आएगी, यह तो हमने सपने में भी नहीं सोचना चाहिए। हमें लगता है कि ब्राह्मणों ने उस घटना का बहुत बड़ा हिस्सा चुराया होगा क्योंकि कोई भी व्यक्ति अपने मुंह से अपनी गलतियों को कहने की हिम्मत नहीं करता। उन्होंने उस घटना को अपने ग्रंथ में लिख रखा है, यही बहुत बड़े आश्चर्य की बात है, हमारे सामने यह सवाल आता है कि (ब्राह्मण) परशुराम ने इक्कीस बार क्षत्रियों को पराजित करके उनका सर्वनाश किया और उनकी अभागी नारियों के अबोध, मासूम बच्चों को भी कत्ल कर दिया, इसमें उनसे बड़ा पुरुषार्थ किया और उसकी यह बहादुरी बाद में आने वाली पीढ़ियों को भी मालूम हो, इसलिए ब्राह्मण ग्रंथकारों ने इस घटना को अपने शास्त्रों में लिख रखा है। लोगों में एक कहावत

प्रचलित है कि हथेली से सूरज को नही ढ़ंका जा सकता। उसी प्रकार यह हकीकत जबकि उनको शर्मिंदा करने वाली थी, फिर भी उसकी इतनी प्रसिद्धि हुई थी कि उनसे उस घटना पर जितना परदा डालना सम्भव हो, उतनी कोशिश उन्होंने की और जब कोई इलाज ही नहीं बचा, तब उन्होंने उस घटना को लिखकर रख दिया। हां ब्राह्मणों ने इस घटना की जितनी हकीकत लिखकर रख दी, उसी के बारे में यदि कुछ सोच-विचार किया जाए तो मन को बड़ी पीड़ा होती है क्योंकि परशुराम ने जब उन क्षत्रिय गर्भधारिणी नारियों का पीछा किया, तब उन गर्भिणियों को कितनी यातनाएं सहनी पड़ी होगी! पहली बात तो यह कि नारियों को दौड़-भाग करने की आदत बहुत कम होती है। उसमें भी कई नारियां मोटी और कुलीन होने की वजह से जिनको अपने घर की देहलीज पर चढ़ना भी मालूम नहीं था, घर के अन्दर उन्हें जो कुछ भी लगता था, वह सब नौकर लोग लाकर देते थे। मतलब, जिन्होंने बड़ी सफलता से उनकी छत्रछाया में अपने जीवन का पालन-पोषण किया था, उनपर अब अपने पेट के गर्भ के बोझ को लेकर सूरज की चिलचिलाती धूप में टेढ़े-मेढ़े रास्तों से भागने की मुसीबत आई। इसका मतलब है कि वे भयंकर आपत्ति के शिकार थे। उनको दौड़-भाग करने की आदत बिल्कुल ही नहीं होने की वजह से पांव को पांव टकराते थे और कभी धड़ल्ले से चट्टान पर, तो कभी पहाड़ की खाइयों में गिरती होगी। उससे कुछ नारियों के माथे पर, कुछ नारियों की कुहनी को, कुछ नारियों के घुटनों को और कुछ नारियों के पांव को ठेस-खरौंच लगकर खून की धाराएं बहती होंगी और परशुराम पीछे-पीछे दौड़कर आ रहा है, यह सुनकर और भी भागने-दौड़ने लगती होंगी। रास्ते से भागते-दोड़ते समय उनके नाजुक पांवों में कांटे, कंकड़ चुभते होंगे। कंटीले पेड़-पौधों से उनके बदन के कपड़े भी फट गये होंगे और उन्हे कांटे भी चुभते होंगे। उसकी वजह से उनके नाजुक बदन से लहू भी बहता होगा। चिलचिलाती धूप में भागते-भागते उनके पांव में छाले भी पड़ गये होंगे और कमल के डंठल के समान नाजुक नीलवर्ण कांति मुरझा गई होगी। उनके मुंह से फेन बहता होगा। उनकी आंखों में आंसू भर आये होंगे। उनके मुंह को एक-एक दिन, दो-दो दिन पानी भी नहीं छुआ होगा। इसलिए बेहद थकान से पेट का गर्भ पेट में ही शोर मचाता होगा। उसको ऐसा लगता होगा कि यदि अब धरती फट जाए तो कितना अच्छा होगा। मतलब, उसमें हम अपने आपको झोंक देते और इस चण्ड से मुक्त हो जाते। ऐसी स्थिति में उन्होंने आंखें फाड़-फाड़ कर भगवान की प्रार्थना निश्चित रूप से की होगी कि भगवान! तूने हम पर यह क्या स्थिति ढाई है? हम स्वयं बलहीन हैं, इसलिए हमको अबला कहा जाता है। हमें हमारे पतियों का जो कुछ बल प्राप्त था, वह भी इस चण्ड ने छीन लिया है। यह सब मालूम होने पर भी तू बुजदिल होकर कायर की तरह हमारा कितना इम्तिहान ले रहा है। जिसने हमारे शौहर को जान से मार डाला और हम अबलाओं पर हथियार उठाये हुए है और इसी में जो अपना पुरुषार्थ समझता है, ऐसे चण्ड के अपराधों को देखकर तू समर्थ होने पर भी मुंह में उंगली दबाये पत्थर जैसा बहरा-अंधा क्यों बन बैठा है? इस तरह वह नारियां बेसहारा होकर किसी के सहारे की तलाशवाला मुंह किये ईश्वर की याचना कर रही थीं, उसी समय चण्ड परशुराम वहां पहुंचकर उसने उन अबलाओं को नहीं भगाया होगा? फिर तो उनकी यातनाओं की कोई सीमा ही नहीं रही होगी, उनमें से कुछ नारियों ने बेहिसाब चिल्ला-चिल्लाकर, चीख-चीखकर अपनी जान नहीं गवाई होगी? और शेष नारियों ने बड़ी विनम्रता से उस चण्ड परशुराम से दया की भीख नहीं मांगी होगी कि हे परशुराम, हम आपसे इतनी ही दया की भीख मांगना चाहते हैं कि, हमारे गर्भ से पैदा होने वाले अनाथ बच्चों की जान बख्शों, हम सभी आपके सामने इसी के लिए अपना आंचल पसार रहे हैं। आप हम पर इतनी ही दया करो। अगर आप चाहते हों, तो हमारी जान भी ले सकते हो लेकिन हमारे इन मासूम बच्चों की जान न लो। आपने हमारे शौहर को बड़ी बेरहमी से मौत के घाट उतार दिया है। इसलिए हमें बेसमय वैधव्य प्राप्त हुआ है और अब हम सभी प्रकार के सुखों से कोसों दूर हो गये। अब हमें आगे बाल-बच्चे होने की भी कोई उम्मीद नहीं रही। अब हमारा सारा ध्यान इन बच्चों की ओर लगा हुआ है। अब हमें इतनी ही सुख चाहिए। हमारे सुख की आशास्वरूप हमारे वे जो मासूम बच्चे हैं, उनको भी जान से मारकर हमें आप क्यों तड़पते देखना चाहते हो? हम आपसे इतनी ही भीख मांगना चाहते हैं। वैसे तो हम आपके धर्म

नारियों ने बड़ी विनम्रता से उस चण्ड परशुराम से दया की भीख नहीं मांगी होगी कि हे परशुराम, हम आपसे इतनी ही दया की भीख मांगना चाहते हैं कि, हमारे गर्भ से पैदा होने वाले अनाथ बच्चों की जान बख्शों, हम सभी आपके सामने इसी के लिए अपना आंचल पसार रहे हैं।

की ही सन्तान हैं। किसी भी तरह से क्यों न हो, आप हमपर रहम कीजिए। इतने करुणापूर्ण, भावपूर्ण शब्दों से उस चण्ड परशुराम का दिल कुछ न कुछ तो पिघल जाना चाहिए था, लेकिन आखिर पत्थर पत्थर ही साबित हुआ। वह उन्हें प्रसूत हुए देखकर उनसे उनके नवजात शिशु छीनने लगा। तब उन्होंने उन नवजात शिशुओं की रक्षा के लिए उन पर औंधी गिर पड़ी होंगी और गर्दन उठाकर कह रही होंगी की हे परशुराम, आपको यदि इन नवजात शिशुओं की जान ही लेनी है, तो सबसे पहले यही बेहतर होगा कि हमारे सिर कटवा लो, फिर हमारे पश्चात आप जो करना चाहो सो कर लो, किन्तु हमारी आंखों के सामने हमारे इन नन्हे-मुन्हे बच्चों की जान न लो। लेकिन कहते हैं न कुत्ते की दुम टेढ़ी की टेढ़ी ही रहती है। उसने हमारी कुछ न सुनी। यह कितनी नीचता। उन नारियों की गोद में खेल रहे उन नवजात शिशुओं को जबर्दस्ती छीन लिया गया होगा, तब उन्हें जो यातनाएं हुई होंगी, जो मानसिक पीड़ाएं हुई होंगी, उस स्थिति को शब्दों में व्यक्त करने के लिए हमारे हाथ की कलम भी थरथराने लगते है। खैर, उस जल्लाद ने उन नवजात

शिशुओं की जान उनके माताओं की आंखों के सामने ली होगी। उस समय कुछ माताओं ने अपनी छाती को पीटना, बालों को नोचना और जमीन को कुरेदना शुरू कर दिया होगा। उन्होंने अपने ही हाथ से अपने मुंह में मट्टी के ढेले ठूस-ठूसकर अपनी जान भी गंवा दी होगी। कुछ माताएं पुत्रशोक में बेहोश होकर गिर पड़ी होंगी। उनके होश-हवास भूल गये होंगे। कुछ माताएं पुत्रशोक के मारे पागल सी हो गई होंगी। हाय मेरा बच्चा, हाय मेरा बच्चा, करते करते दर-दर, गांव-गांव, जंगल-जंगल भटकती रही होंगी । लेकिन इस तरह की सारी हकीकत हमें ब्राह्मण-पुराहितों से मिल सकेगी, यह उम्मीद लगाये रहना फिजूल की बातें हैं।

इस तरह ब्राह्मण-पुरोहितों के पूर्वज अधिकारी परशुराम ने सैकड़ों क्षत्रियों को जान से मारकर उनके बीवी-बच्चो के भयंकर बुरे हाल किये और उसी को आज के ब्राह्मणों ने शूद्रादि-अतिशूद्रों का सर्वशक्तिमान परमेश्वर, सारी सृष्टि का निर्माता कहने के लिए कहा है, यह कितने बड़े आश्चर्य की बात है। परशुराम के पश्चात ब्राह्मणों ने इन्हें कम परेशान नहीं किया होगा। उन्होंने अपनी ओर से जितना सताया जा सकता है, उतना सताने में कोई कसर बाकी छोड़ी नहीं होगी। उन्होंने घृणा से इन लोगों में से अधिकांश लोगों के भयंकर बुरे हाल किये। उन्होंने इनमें के कुछ लोगों को इमारतों-भवनों की नींव में जिन्दा गाड़ देने में कोई आनाकानी नहीं की, इस बारे में इस ग्रंथ में लिखा गया है।

उन्होंने इन लोगों को इतनी नीच समझा था कि इसी समय कोई शूद्र नदी के किनारे अपने कपड़े धो रहा हो और इत्तेफाक से वहां यदि कोई ब्राह्मण आ जाए, तो उस शूद्र को अपने सभी कपड़े समेटकर बहुत दूर, जहां से ब्राह्मण के तन पर पानी का एक मामूली कतरा भी उड़ने की कोई सम्भावना न हो, ऐसे पानी के बहाव की नीचे की जगह पर जाकर अपने कपड़े धोना पड़ता था। यदि वहां से ब्राह्मण के तन पर पानी की बूंद का एक कतरा भी छू गया या उसको इस तरह का सन्देह भी हुआ, तो ब्राह्मणपण्डा आग के शोले की तरह लाल हो जाता था और उस समय उसके हाथ में जो भी मिल जाए या अपने ही पास के बर्तन को उठाकर व आव देखन ताव देख उस शूद्र के माथे को निशाना बनाकर बड़े जोर से फेंककर मारता था। उससे उस शूद्र का माथा खून से भर जाता था। बेहोशी में जमीन पर गिर पड़ता था। फिर कुछ देर बाद जब होश आता था, तब अपने खून से भीगे हुए अपने कपड़ों को हाथ में लेकर बिना किसी शिकायत के मुंह लटकाये अपने घर चला जाता था। यदि सरकार में शिकायत करे, तो चारो तरफ ब्राह्मणशाही का जाल फैला हुआ है, बल्कि शिकायत करने का खतरा यह रहता था कि खुद को ही सजा भोगने का मौका न आ जाए। अफसोस! अफसोस! हे भगवान, यह कितना बड़ा अन्याय है।

खैर! एक दर्दभरी कहानी है इसलिए कहना पड़ रहा है किन्तु इस तरह की और इससे भी भयंकर घटनाएं घटती थीं, जिसकी दर्द शूद्रादि-अतिशूद्रों को बिना शिकायत के सहना पड़ता था। ब्राह्मणवादी राज्यों में शूद्रादि-अतिशूद्रों को व्यापार-वाणिज्य के लिए या अन्य किसी काम के लिए घूमना हो तो बड़ी कठिनाइयों का मुकाबला करना पड़ता था, बड़ी कठिनाईयां बर्दाश्त करनी पड़ती थीं। इनके सामने मुसीबतों का तांता लग जाता था। उसमें भी एकदम सुबह के समय तो बहुत भारी दिक्कतें खड़ी हो जाती थीं। चूंकि उस समय सभी चीजों की छाया काफी लम्बी होती है, यदि ऐसे समय शायद कोई शूद्र रास्ते से जा रहा हो और सामने से किसी ब्राह्मण की सवारी आ रही है, यह देखकर उस ब्राह्मण पर अपनी छाया न पड़े डर से कंपित होकर उसको पल दो पल अपना समय फिजूल बरबाद करके रास्ते की एक ओर होकर वही बैठ जाना पड़ता था। फिर उस ब्राह्मण के चले जाने के बाद उसको अपने काम के लिए निकलना पड़ता था। मान लीजिए कभी-कभार बगैर ख्याल के उसकी छाया उस ब्राह्मण पर पड़ी तो ब्राह्मण तुरन्त क्रोधित होकर चण्ड बन जाता था और उस शूद्रा को मरते दम तक मारता-पीटता था और उसी वक्त नदी पर जाकर स्नान कर लेता था।

शूद्रा में से कई लोगों की (जातियों को) रास्ते पर थूंकने की भी मनाही थी। इसलिए उन शूद्रों को ब्राह्मणों की बस्तियों से गुजरना पड़ा तो अपने साथ थूंकने के लिए मिट्टी के किसी एक बरतन को रखना पड़ता था। समझ लो, उसकी थूंक जमीन पर पड़ गई और उसको ब्राह्मणपण्डे ने देख लिया, तो उस शूद्र के दिन भर गये। अब उसकी खैर नहीं। इस तरह ये लोग (शूद्रादि-अतिशूद्र जातियां) अनगिनत मुसीबातें को सहते-सहते मटियामेट हो गये। लेकिन अब हमें वे लोग इस नरक से भी बदतर जीवन से कब मुक्त होते हैं, इसी का इंतजार है। जैसे किसी व्यक्ति ने बहुत दिनों तक जेल के अन्दर अपनी जिन्दगी गुजार दी हो, वह कैदी अपने साथी मित्रों से, बीवी-बच्चों से, भाई-बहनों से मिलने के लिए या स्वतंत्र रूप से आजाद पंछी की तरह घूमने के लिए बड़ी उत्सुकता से जेल से मुक्त होने के दिन का इंतजार करता है। उसी तरह का इंतजार, बेसबरी इन लोगों को भी होना स्वाभाविक ही है। ऐसे समय बड़ी खुशकिस्मती कहिए, ईश्वर को उनकी दया आई। इस देश में अंग्रेजों की सत्ता कायम हुई। और उनके द्वारा ये लोग ब्राह्मणशाही की शारीरिक गुलामी से मुक्त हुए। इसीलिए ये लोग अंग्रेजी सत्ता का शुक्रिया अदा करते हैं। ये लोग अंग्रजों के इन उपकारों को कभी भूलेंगे नहीं। उन्होंने इन्हें आज सैकड़ों साल से चली आ रही ब्राह्मणशाही की गुलामी की फौलादी जंजीरों को तोड़कर के मुक्ति की राह दिखाई है। उन्होंने इनके बीवी-बच्चों को सुख के दिन दिखाये हैं। यदि वे वहां न आते, तो ब्राह्मणों ने, ब्राह्मण-शाही ने उन्हें कभी सम्मान और स्वतंत्रता की जिन्दगी न गुजारने दी होती। इस बात पर कोई शायद इस तरह का संदेह उठा सकता है कि आज ब्राह्मणों की तुलना में शूद्रादि-अतिशूद्रों की संख्या करीबन दस गुना ज्यादा है। फिर भी ब्राह्मणों ने शूद्रादि-अतिशूद्रों को कैसे क्या मटियामेट कर दिया, कैसे क्या गुलाम बना लिया? इसका जवाब यह है कि एक बुद्धिमान, चतुर आदमी दस अज्ञानी लोगों के दिलो-दिमाग को अपने पास गिरवी रख सकता है, उन पर अपना स्वामित्व लाद सकता है और दूसरी भी बात यह है कि वे दस अनपढ़ लोग यदि एक ही मत के होते, तो उन्होंने उस बुद्धिमान, चतुर आदमी की दाल न गलने दी होती, एक न चलने दी होती किन्तु वे दस लोग दस अलग-अलग मतों के होने की वजह से ब्राह्मणो-पुरोहितों जैसे धूर्त-पाखंडी लोगों को उन दस

भिन्न-भिन्न मतवादी लोगों को अपने जाल में फंसाने में कुछ भी कठिनाई न होती। उसी तरह शूद्रादि-अतिशूद्र की विचार प्रणाली, मत-मान्यताएं एक दूसरे से मेलमिलाप न करे, इसलिए प्राचीन काल में ब्राह्मणो-पुरोहितों ने एक बहुत बड़ी धूर्ततापूर्ण और बदमाशी भरी विचारधारा खोज निकाली। उन शूद्रादि-अतिशूद्रों के समाज की संख्या जैसे-जैसे बढ़ने लगी, वैसे-वैसे ब्राह्मणों में डर की भावना उत्पन्न होने लगी। इसीलिए उन्होंने शूद्रादि-अतिशूद्रों में आपस में घृणा और नफरत की भावना बढ़ती रहे, इसकी योजना तैयार की। उन्होंने समाज में प्रेम के बजाय ज़हर के बीज बोय। इसमें उनकी चाल यह थी कि यदि शूद्रादि-अतिशूद्रों (समाज) आपस में लड़ते-झगड़ते रहेंगे तब कहीं यहां अपने टिके रहने की बुनियाद मजबूत रहेगी और हमेशा हमेशा के लिए वे लोग वंश परम्परा से अपनी और अपने वंशजों की गुलामी में रहकर हम लोगों को बगैर मेहनत के उनके पसीने से प्राप्त कमाई पर बगैर किसी रोक-टोक के गुलछर्रे उड़ाने का मौका मिलेगा। अपनी इस चाल,

ब्राह्मण पण्डा-पुरोहितों ने शूद्रादि में आपस में नफरत के बीज जहर की तरह बो दिये और खुद उन सभी की मेहनत पर एशोआराम भोग रहे हैं। संक्षेप में, ऊपर कहा ही गया है कि इस देश में अंग्रेज सरकार आने की वजह से शूद्रादि-अतिशूद्रों की जिन्दगी में एक नई रोशनी आई।

विचारधारा को कामयाबी देने के लिए जातिभेद की फौलादी जहरीली दीवारें खड़ी करके उन्होंनें इसके समर्थन में अपने जाति स्वार्थसिद्धि के कई ग्रंथ लिख डाले। उन्होंने इन गंथों के माध्यम से अपनी बातों को अज्ञानी लोगों के दिलो-दिमाग पर पत्थर की लकीर की तरह लिख दिया। उनमें से कुछ लोग जो ब्राह्मणों के साथ बड़ी कड़ाई और जिद से लड़े, उनको और उनकी जो बाद की सन्तान होगी, उनको उन्हीं लोगों ने मतलब फिलहाल जिनको माली, कुणवी, (कुर्मी आदि) कहा जाता है, उन्होंने छूना नहीं चाहिए। इस तरह की जहरीली बातें ब्राह्मणपण्डा-पुराहितों ने उनके दिलो-दिमाग में भर दी। जब यह हुआ, तब इसका परिणाम यह हुआ कि उनका आपसी मेल-मिलाप बन्द हो गया और वे लोग अनाज के एक-एक दाने के लिए मोहताज हो गये। इसलिए इन लोगो को जीने के लिए मरे हुए जानवरों का मांस मजबूर होकर खाना पड़ा। उनके इस आचार-व्यवहार को देखकर आज के शूद्र जो बहुत ही अहंकार से अपने आपको माली, कुणबी, सुनार, दरजी, लुहार, बढ़ई, (तेली, कुर्मी) आदि बड़ी-बड़ी संज्ञाएं लगाते हैं, क्योंकि वे लोग केवल इन प्रकार का व्यवसाय करते हैं। कहने का मतलब यही है कि वे ही लोग अपने पूर्वज एक ही घराने के होते हुए भी, आपस में लड़ते-झगड़ते हैं और एक-दूसरे को नीच समझते हैं। इन सब लोगों के पूर्वज स्वदेश के लिए ब्राह्मणों से बड़ी जिद से, बड़ी निर्भयता से लड़ते रहे, इसका परिणाम यह हुआ कि ब्राह्मणों ने इन सबको समाज के निचले स्तर पर लाकर रख दिया और दर-दर के भिखारी बना दिया। लेकिन अफसोस यह है कि इसका रहस्य किसी के ध्यान में नहीं आ रहा है। इसलिए ये लोग ब्राह्मण पण्डा-पुराहितों के बहकावे में आकर आपस में नफरत करना सीख गये। अफसोस! अफसोस! ये लोग भगवान की निकाह में कितने अपराधी हैं। इन सबका आपस में इतना बड़ा नजदीकी सम्बंध होने पर भी किसी त्योहार को ये उनके दरवाजे पर दूर से ही पका-पकाया भोजन मांगने के लिए आते हैं, तो वे लोग इनको नफरत की निगाह से देखते हैं और कभी-कभी तो हाथ में डण्डा लेकर इन्हें मारने के लिए भी दौड़ते हैं। खैर! इस तरह जिन-जिन लोगों ने ब्राह्मण पण्डा-पुरोहितों से जिस-जिस तरह से संघर्ष किया उनसे उन्होंने उसके अनुसार उनको जातियों में बांट कर एक तरह से सजा सुना दी या जातियों को दिखावटी आधार देकर सभी को पूरी तरह से गुलाम बना लिया। ब्राह्मण पण्डा-पुरोहित सब में सर्वश्रेष्ठ और सर्वाधिकार सम्पन्न हो गये। है न मजे की बात! जब से ब्राह्मणों ने शूद्रादि-अतिशूद्रों में जातिभेद की भावना को पैदा किया, बढ़ावा दिया, तब से उन के दिलो-दिमाग आपस में उलझ गये और नफरत से अलग-अलग हो गये। ब्राह्मण-पुरोहित अपने षडयंत्र में कामयाब हुए। उनको अपना मनचाहा व्यवहार करने की पूरी स्वतंत्रता मिल गई। इस बारे में एक कहावत प्रसिद्ध है कि 'दोनों का झगड़ा और तीसरे का लाभ।' मतलब यह कि ब्राह्मण पण्डा-पुरोहितों ने शूद्रादि में आपस में नफरत के बीज जहर की तरह बो दिये और खुद उन सभी की मेहनत पर एशोआराम भोग रहे हैं।

संक्षेप में, ऊपर कहा ही गया है कि इस देश में अंग्रेज सरकार आने की वजह से शूद्रादि-अतिशूद्रों की जिन्दगी में एक नई रोशनी आई। ये लोग ब्राह्मणों की गुलामी से मुक्त हुए, यह कहने में किसी भी प्रकार का संकोच नहीं है। फिर भी हमको यह कहने में बड़ा दर्द होता है कि अभी भी हमारी इस सरकार ने शूद्रादि-अतिशूद्रों को शिक्षित बनाने की दिशा में गैर-जिम्मेदारीपूर्ण रवैया अख्तियार करने की वजह से ये लोग अनपढ़ के अनपढ़ ही रहे। ये लोग शिक्षित पढ़-लिखे बन जाने की वजह से ब्राह्मणों के नकली-पाखंडी (धर्म) ग्रंथों के शास्त्र-पुराणों के अन्ध भक्त बनकर मन से, दिलो-दिमाग से गुलाम ही रहे। इसलिए उन्हें सरकार के पास जाकर कुछ फरियाद करके अंग्रेज सरकार और अन्य सभी जाति के लोगों के पारिवारिक और सरकारी कामों में कितनी लूट-खसोट करके खाते हैं, गुलछर्रे उड़ाते हैं, इस बात की ओर हमारी अंग्रेज सरकार का अभी तक कोई ध्यान ही नहीं गया है। इसलिए हम चाहते हैं कि अंग्रेज सरकार ने सभी जनों के प्रति समानता का भाव रखना चाहिए और उन तमाम बातों की ओर ध्यान देना चाहिए कि जिससे शूद्रादि-अतिशूद्र समाज के लोग ब्राह्मणों की मानसिक गुलामी से मुक्त हो सकें। अपनी इस सरकार से हमारी यही प्रार्थना है।

इस किताब को लिखते समय मेरे मित्र विनायकराव बापूजी भण्डारकर और सा. राजन्ना लिंगू इन्होंने मुझे जो उत्साह दिया, उसके लिए मैं उनको बहुत धन्यवाद देता हूं।

वन्दना टेटे

कवि का पन्ना

(13 सितंबर, 1969 को झारखंड प्रदेश के सामटोली, सिमडेगा में जन्मीं वंदना टेटे हिन्दी की उन समकालीन कवयित्रियों में हैं जिनकी कविताओं में आदिवासियत का स्वर सघन रुप में अभिव्यक्त हुआ है। कविता संग्रह *कोनजोगा* और वैचारिक पुस्तक *आरेचर* के अलावे उन्होंने दर्जन भर पुस्तकें संपादित की हैं। पत्रकारिता के लिए झारखंड सरकार का राज्य सम्मान और संस्कृति मंत्रालय भारत सरकार द्वारा सीनियर फेलोशिप उन्हें प्राप्त हो चुका है। – संपादक)

हम धरती की माड़ हैं

हम सब
इस धरती की माड़
इस सृष्टि के हाड़
हमारी हड्डियाँ
विंध्य, अरावली और नीलगिरि
हमारा रक्त
लोहित, दामुदह, नरमदा और कावेरी
हमारी देह
गंगा-जमना-कृष्णा के मैदान
हमारी छातियाँ
जैसे झारखण्ड के पठार
और जैसे कंचनजंघा
हम फैले हुए हैं
हम पसरे हुए हैं
हम यहीं इसी पुरखा ज़मीन में
धँसे हैं सदियों से

हमें कौन विस्थापित कर सकता है
सनसनाती हवाओं और तूफ़ानों-सी
हमारी ध्वनियों-भाषाओं को
कौन विलोपित कर सकता है
कोई इनसान?
कोई धर्म?
कोई सत्ता?

सिंगबोङा और चांदबोङा को
इस जवान धरती को
कौन हिला सकता है
कह गई है पुरखा बुढ़िया
कह गया है पुरखा बूढ़ा

कोई नहीं, कोई नहीं

पुरखों का कहन

उनकी कविताओं में
शब्द नहीं बोलते
उनके बनाए चित्रों में
रंग नहीं बहकते
उनकी कहानियों में
तख़्त-ओ-ताज के लिए
ख़ून नहीं बहता
फिर भी वे
कविता करते हैं
चित्र बनाते हैं
कहानियाँ बाँटते हैं

कौन हैं वे लोग
जिन्होंने शब्दों-बोलियों को गरिमा बख़्शी
चित्रों को कामशास्त्र
अजन्ता नहीं होने दिया
कहानियों को अनुभव
और आनन्द के लिए ही
सुना और सुनाया
उसे इतिहास नहीं बनने दिया

कौन हैं वे लोग
जो नख-शिख वर्णन के बग़ैर
दुनिया का सबसे सुन्दर
प्रेमगीत गाते हैं।

जगदानन्द सिंह, प्रदेश अध्यक्ष, राष्ट्रीय जनता दल, वीरचन्द पटेल पथ, पटना-1 द्वारा प्रकाशित एवं वितरित। संपादन : प्रेमकुमार मणि

पार्टी गतिविधियां

मंडल-मसीहा शरद यादव जी ने अपनी पार्टी का विलय राष्ट्रीय जनतादल में विधिवत किया। इस अवसर पर समारोह को संबोधित करते हुए बिहार के नेता प्रतिपक्ष तेजस्वी प्रसाद यादव।

23 मार्च 2022 : समाजवादी नेता राममनोहर लोहिया के जन्मदिन पर उनके चित्र पर माल्यार्पण करते हुए बिहार प्रदेश राजद के अध्यक्ष जगदानंद सिंह।

पूर्व केन्द्रीय मंत्री और दिग्गज समाजवादी नेता देवेन्द्र यादव जी ने अपनी पार्टी का विधिवत विलय राष्ट्रीय जनतादल में किया।

विकासशील इंसान पार्टी के दिवंगत विधायक मुसाफिर पासवान जी के पुत्र अमर पासवान ने राष्ट्रीय जनतादल की सदस्यता ली। वह बोचहा विधानसभा क्षेत्र से राजद उम्मीदवार बनाए गए।

राष्ट्रीय जनता दल कार्यालय, बिहार द्वारा आदेशित तथा हमारा प्रेस, डोरण्डा, रांची द्वारा मुद्रित, मो. 9334424709